चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र



FEB. '51

6



किसी समय राजमन्द्री में धनुर्धारी नामक एक रईस रहता था। उसे आम बहुत पसन्द थे। इसलिए उसने अपने घर के नजदीक ही थोड़ी सी जमीन खरीदी और उसमें देश देश से तरह तरह के कलमी आम लाकर लगा दिए। वह खुद अमराई में पानी डाला करता और रात दिन उसकी रखवाली करता। वह हमेशा सोचा करता कि कब ये पौधे बड़े होंगे ? कब इनमें बौर और फल लगेंगे और कब मैं पके आम खाऊँगा ?

सब से पहले लँगड़ा आम फला। लेकिन अजीब बात तो यह हुई कि उसमें दो ही फल आए। धनुर्धारी ने जी-जान से फलों की रखवाली की और पकने के पहले तोड़ कर दोनों फलों को पाल पर डाल दिया। दोनों आम खूब बड़े थे। एक-दो दिन में वे पक गए और उनकी मीठी सुगन्ध से सारा घर गमकने लगा। धनुर्धारी की न बीबी थी, न बाल-बच्चे। सिर्फ एक रसोइया था जिसका नाम था रामचरण। ऐसा बढ़िया आम, अकेले खाने में क्या मजा ! यह सोच कर वह गाँव के अपने एक दोस्त को न्योता देने चला। इतने में सड़क पर उसे एक परदेशी मिला। धनुर्धारी को ऐसा लगा मानों उसे कहीं देखा है। उसने बहुत याद किया। पर कोई फायदा नहीं हुआ। तब उसके नजदीक जाकर पूछा -"बाबूजी ! आप कहाँ के रहने वाले हैं ?"

उस परदेशी ने टूटी-फूटी भाषा में जवाब दिया कि वह काशी का रहने वाला है। उसने धनुर्धारी को पहचान लिया और कहा-



"धनुर्धारी ! अच्छा ! अच्छा!" धनुर्धारी को भी याद आ गया। जब वह काशी जाकर वहाँ एक महीने तक रहा था तभी इस आदमी से उसकी जान-पहचान हुई थी। इसका नाम गोवर्धन पन्त था।

"आप यहाँ कैसे आ गए ?" धनुर्धारी ने पूछा।

"दक्खिन की यात्रा करने निकला हूँ।" गोवर्धन ने जवाब दिया।

धनुर्धारी को बहुत खुशी हुई और उसने सोचा कि वह उसे अपने घर ले जाकर कुछ आम के कतरे खिलाए। इसलिए गोवर्धन को साथ लेकर घर लौटा। गोवर्धन को दालान में बैठा कर वह अन्दर गया और दोनों आम निकाल कर रामचरण से कहा-"जल्दी से छील कर कतरे बना लो और चाँदी के कटोरों में रख कर ले आओ !" यह कह कर वह फिर दालान में गया और मेहमान से बातें करने लगा।

रामचरण ने चाकू से दोनों आम छील कर काट लिए। लेकिन उन सुनहरी फाँकों को देख कर उसका मन ललचा गया और उसने एक फाँक मुँह में रख ली ! वाह ! क्या स्वाद था ! एक और फ़ाँक खाने की इच्छा हुई। एक के बाद और एक ! वह मन में कहता-" बस, अब सिर्फ़ और एक खाऊँगा।" यों वह बाहर दालान में बैठ कर बात करने वालों, दोनों को भूल ही गया और एक एक करके दोनों आम चट कर गया। जब बहुत देर हो गई और रामचरण आम काट कर नहीं लाया तो धनुर्धारी ने पुकारा-"रामचरण ! अभी तक आम काटे नहीं ?"

"कैसे कहूँ बाबूजी ! छुरी तो इतनी भोंड़ी है कि इससे पानी भी न कटे !" यह



कह कर उसने एक पुरानी भोंड़ी छुरी ले जाकर मालिक को दिखा दी।

धनुर्धारी को बहुत गुस्सा आ गया और उसने डाँट कर कहा-"अब तक तुम क्या कर रहे थे ? क्या हम लोग दिन भर यों ही बैठे रहेंगे ?" यह कह कर वह उठा और पिछवाड़े में रखी सिलौटी पर छुरी तेज करने लगा। उधर बेचारे गोवर्धन दालान में अकेले बैठे थे। रामचरण ने इशारे से उनको खिड़की के नजदीक बुलाया। गोवर्धन चकित होकर उसके पास गए। तब रामचरण ने छुरी को तेज करते हुए धनुर्धारी की ओर इशारा करके गोवर्धन से कहा- "सावधान हो जाओ!"

हक्का-बक्का होकर उन्होंने खिड़की से झाँका और पूछने लगे- "क्यों ? वह क्यों छुरी तेज कर रहा है?"

तब रामचरण ने कहा- "तुम निरे बेवक़ूफ़ जान पड़ते हो। क्या तुम अब भी नहीं समझ सके कि वे क्यों तुम्हें इतने प्रेम से बुला लाए हैं ? अरे भई, वे रोज इसी तरह एक एक परदेशी को घर बुला लाते हैं और उसके दोनों कान काट कर काली जी पर चढ़ा देते हैं। आज दुर्भाग्य से तुम उनके पाले पड़े हो। देख लेना ज्यों ही छुरी तेज हुई कि आकर वे तुम्हारे दोनों कान काट लेंगे।"

यह बात सुन कर पहले तो गोवर्धन को विश्वास न हुआ। पर अन्त में उन्होंने सोचा कि कौन जाने, शायद दक्षिण में मेहमानों की ऐसी ही खातिर की जाती हो ? यह सोच कर वे वहाँ से तुरन्त सिर पर पैर रख कर भाग खड़े हुए।

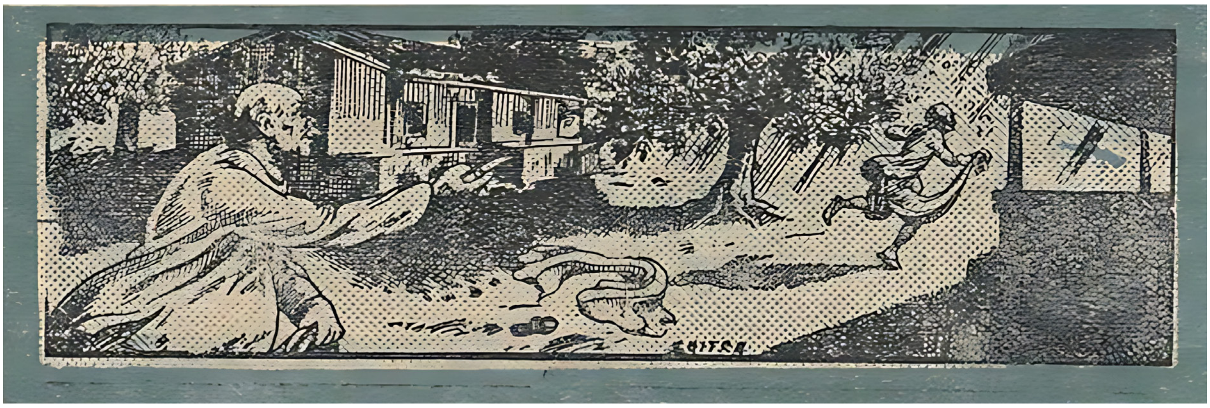
रामचरण ने गोवर्धन को थोड़ी दूर जाने दिया; फिर जोर से "चोर! चोर !" कह कर चिल्लाने लगा। यह सुन कर धनुर्धारी छुरी

हाथ में लिए लपक कर अन्दर आया और पूछने लगा-"कौन है ? कहाँ है चोर ?" तब रामचरण ने हाय ! हाय ! करते हुए कहा-"क्या कहूँ ? बाबूजी वह आपका मेहमान क्या था, पक्का चोर था ! देखिए न ! दोनों आम उठा कर भागा जा रहा है !"

यह सुन कर धनुर्धारी -"हाय ! तो क्या दोनों लेकर भाग गया !" कहते हुए बाहर दौड़ा और गोवर्धन का पीछा करते हुए चिल्लाने लगा-"भाई गोवर्धन ! एक तुम रख लो ! मगर एक मुझे काट लेने दो !"

गोवर्धन ने जब पीछे फिर कर छुरी हाथ में लिए दौड़ते आते धनुर्धारी को देखा और सुना- "एक मुझे काट लेने दो !" तो उसे पूरा विश्वास हो गया कि पकड़े जाने पर उसके कानों की खैरियत नहीं। वह गुस्से से बड़बड़ाने लगा-"बदमाश कहीं का ! क्या कान काट लेना ही मेहमानों को न्योता देना है ! तुम्हें कान क्या, कान का एक बाल भी न काटने दूँगा। क्या तू मुझे ही धोखा देना चाहता था ? इस बार फिर काशी आना बच्चू ! तब चखा दूँगा इस चालबाजी का मजा!" यह कहते हुए वह और भी जोर से दौड़ने लगा।

बेचारा धनुर्धारी जरा मोटा आदमी था। इसलिए वह पिछड़ गया। आखिर उसने आमों से हाथ धो लिया और मन ही मन बहुत दुखी होकर घर लौट आया। इसके पहले ही रामचरण आम की दोनों गुठलियाँ कहीं छिपा आया और मुँह लटका कर ऐसे बैठ गया जैसे कुछ जानता ही न हो। अपने बाग के आम खाना बेचारे धनुर्धारी की नसीब में न था।





बाप और बेटा



एक दिन लक्ष्मी देवी ने अपने पति नारायण से कहा-"देव ! हर रोज लाखों आदमी आपकी प्रार्थना करते हैं और अपनी इच्छा पूरी करने को कहते हैं। आप उन बेचारों की सब इच्छाएँ क्यों नहीं पूरी करते ?" यह सुन कर भगवान मुसकुराए और बोले-"पगली ! क्या तुम सोचती हो कि मैं उनकी सब इच्छाएँ पूरी कर दूँगा तो फिर वे चैन से रहने लगेंगे ? नहीं; तुम्हारा सोचना गलत है। वे बेचारे अज्ञानवश न जाने, क्या क्या चाहते रहते हैं ! मैं उनका भला चाहता हूँ। इसलिए उनकी सब इच्छाएँ पूरी नहीं करता।"

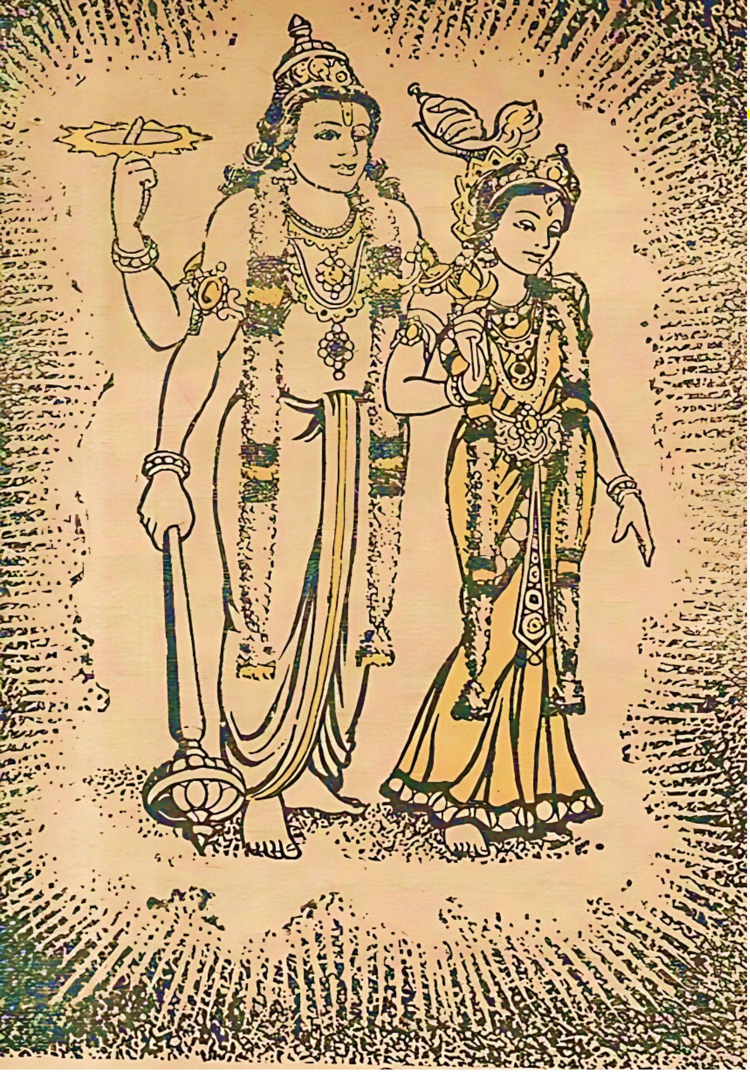
लेकिन देवी को यह सुन कर सन्तोष न हुआ। उन्होंने कहा-"अच्छा! आप एक आदमी की इच्छा तो पूरी कर दीजिए देखें, फिर क्या होता है ?"

तब भगवान ने कहा-"एक गाँव में राजाराम नाम का एक भला आदमी है। बहुत दिन तक उसके बाल-बच्चे न हुए। तब उसने अपनी पत्नी के साथ मेरी पूजा की और सन्तान का वर माँगा। होनहार को जानते हुए भी मैंने उसे एक लड़का दिया। उसने बड़े प्यार से उसका नाम "नारायण" रखा। कुछ दिन बाद लड़के की माँ चल बसी। राजाराम लड़के को ठीक ठीक पाल-पोस न सका। इसलिए लड़का बिलकुल शरारती निकला। अब बाप और बेटे के बीच एक दीवार सी खड़ी हो गई है। बाप समझता है कि लड़का बाप-दादों का नाम मिट्टी में मिला रहा है। लड़का समझता है कि बाप उसका जानी दुशन है। दोनों ही एक दूसरे से परेशान हैं।"

"तो उन बेचारों के मन की इच्छाएँ पूरी करके उनको सुखी बना दीजिए!" देवी ने कहा। भगवान उनकी बात मान गए। उन्होंने "हाँ" कर दिया।

* * * * *

उस दिन नारायण स्कूल से दोपहर को ही घर भाग आया। "इतनी जल्दी क्यों लौट आए ?" उसके पिता ने पूछा।



"मेरे पेट में दर्द हो रहा है !" बेटे ने जवाब दिया।

"घर में आज कचौड़ियाँ बनी हैं। मालूम होता है, तुम्हारे भाग्य में खाना नहीं लिखा था। जाओ, कमरे में जाकर चुपचाप लेटे रहो !" यह कह कर राजाराम ने नारायण को कमरे में धकेल कर बाहर से साँकल चढ़ा दी। कमरे में बन्द होते ही नारायण सोच में पड़ गया। बाहर उसके पिता का भी यही हाल था। वह सोच रहा था-"बचपन कितना सुखमय है ? स्कूल जाकर पाठ सीखने और खेलने- कूदने में कैसा मजा आता है ? घर- गिरस्ती और रुपए-पैसे की चिन्ता नहीं रहती। बात बात पर बदहजमी की शिकायत नहीं होती। मेरा बेटा तो बिलकुल शरारती बन गया है। अगर मैं ही उसकी उम्र का होता तो कितनी खुशी से स्कूल जाता ?" राजाराम ने मन में कहा। उधर नारायण भी कुछ इसी तरह सोच रहा था-"भाड़ में जाय यह स्कूल ! और यह पढ़ाई ! हर जगह, हर मामले में बड़ों की तानाशाही चलती है। उन्हें कोई कुछ कहने वाला नहीं है। वे जितनी कचौड़ियाँ चाहें खा सकते हैं। उन्हें स्कूल जाने की जरूरत नहीं। जहाँ मन चाहे वहाँ चल देते हैं। कितना अच्छा होता, अगर मैं भी जल्दी से बड़ा हो जाता !" नारायण ने मन ही मन सोचा।

"उन दोनों बेचारों की इच्छाएँ पूरी कर दीजिए !" लक्ष्मी देवी ने भगवान से कहा।

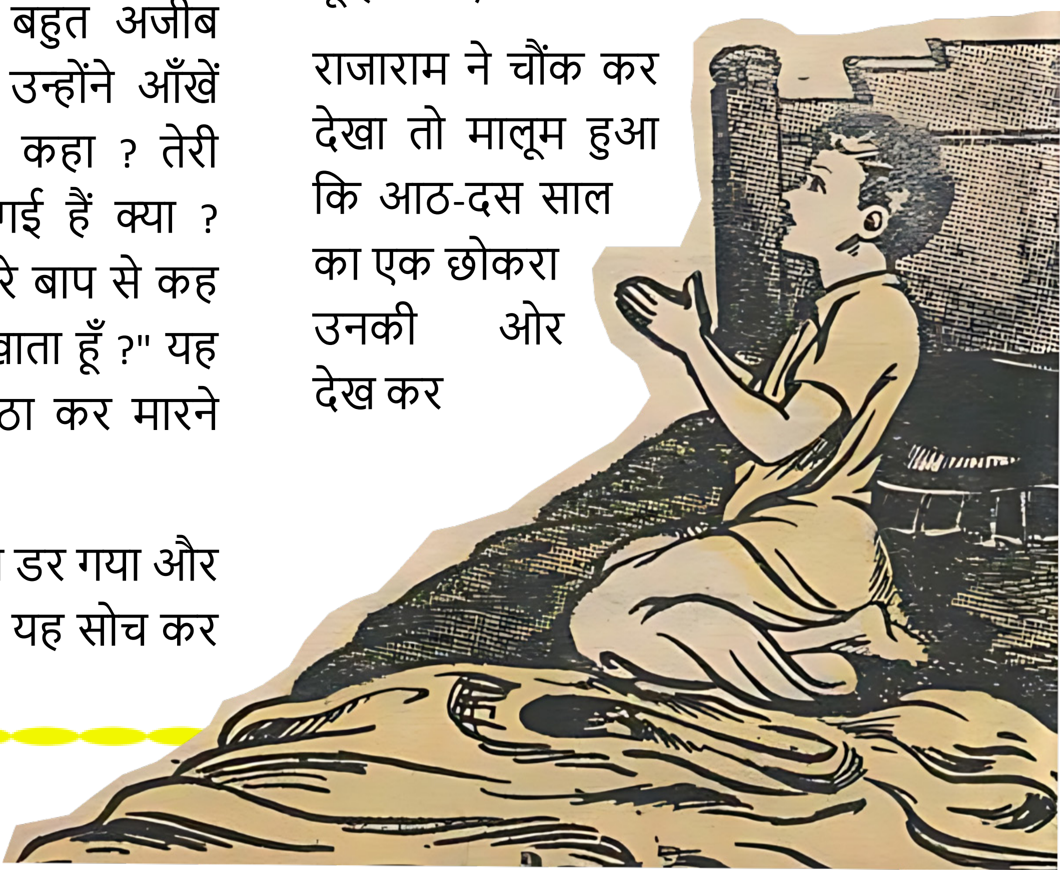
"अच्छा, जैसा तुम चाहती हो !" भगवान ने कहा।

कमरे के बाहर खड़े खड़े राजाराम का रूप बदल गया और वे ठीक नारायण बन गए। कमरे में नारायण का भी पिता का रूप हो गया। लेकिन दोनों में किसी को भी मालूम न था कि दोनों के रूपों में अदला-बदली हो गई है।

थोड़ी देर में राजाराम बाहर गया । उसे ऐसा लगा, मानों मकान बहुत ऊँचे हो गए हैं। दूसरी मञ्जिल देखने के लिए बहुत सिर उठाना पड़ता था। लेकिन राजाराम ने इसके बारे में ज्यादा नहीं सोचा। इतने में उसे सड़क पर पुराने दोस्त गोपाल बाबू दिखाई दिए। राजाराम ने नजदीक जाकर कहा- "क्यों भई गोपाल !" लेकिन गोपाल बाबू बहुत अजीब ढङ्ग से देखने लगे। उन्होंने आँखें तरेर कर कहा-"क्या कहा ? तेरी आँखें सर पर चढ़ गई हैं क्या ? अच्छा, देख लेना ! तेरे बाप से कह कर कैसा सबक सिखाता हूँ ?" यह कह कर वे छड़ी उठा कर मारने दौड़े।

यह देख कर राजाराम डर गया और भाग खड़ा हुआ। उसे यह सोच कर अचरज हुआ कि वह इतनी तेजी से कैसे दौड़ सका ? क्योंकि इधर कई बरसों से दौड़ने की आदत बिलकुल नहीं थी। दौड़ना तो दूर रहा, कई बरसों से वह ज्यादा दूर पैदल भी नहीं चला था। तिस पर वह कम मोटा-ताजा नहीं था। तोन्द भी निकल आई थी। इसी से उसे यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि गोपाल बाबू दौड़ कर उसे पकड़ न सके। इतने में अचानक उसे एक बात सूझी। वह दौड़ता दौड़ता रुक गया और सोचने लगा-"मैं क्यों इस तरह भाग रहा हूँ ? गोपाल मुझे मारने दौड़े और मैं भाग जाऊँ ?" यह सोचते ही वह ठठा कर हँसने लगा। इतने में किसी ने उसके कधे पर हाथ रख कर कहा-"क्यों रे ! क्या तू इसीलिए भाग आया था ?"

राजाराम ने चौंक कर देखा तो मालूम हुआ कि आठ-दस साल का एक छोकरा उनकी ओर देख कर





हँस रहा है। उसे देखते ही राजाराम क्रोध से तमतमा उठा। "कन्धे पर से हाथ उठाता है कि दूँ दो तमाचे ? कौन है अबे तू ?" राजाराम ने कहा।

"तेरी इतनी हिम्मत हो गई है? कल स्कूल में देखना, मास्टर साहब तुम्हें केसा मजा चखाते हैं?" यह कहते हुए वह लड़का मुँह बिचका कर चला गया। राजाराम को बड़ा अचरज हुआ कि वह नन्हा सा छोकरा कैसे उससे बराबरी की बातें कर गया है ? लेकिन अब राजाराम के पास ज्यादा, समय न था। उसे रसोई की चीजे खरीद ले जानी थी। इसलिए उसने लाला सूरजमल की दूकान पर जाकर कहा-"लालाजी ! चार पसेरी चावल, दो सेर दाल और तीन पाव घी मेरे घर भिजवा दीजिए!"

"जरूर ! जरूर! लेकिन पैसे कोन देगा ?" लाला ने मुसकुराते हुए कहा।

यह सुन कर राजाराम को बड़ा क्रोध आया। आज लाला को क्या हो गया है जो ऐसी बातें कर रहा है? उसने पैसे के लिए जेब में हाथ डाला तो बटुआ नदारद ! सिर्फ खड़ी के टुकड़े, टूटी पेन्सिल , मोर के पंख और किताबों से फाड़ी हुई तस्वीरें दिखाई दी। राजाराम भौंचक्का रह गया। यह सब क्या तमाशा है? बटुए के बदले ये सब चीजें कहाँ से आ गईं उसकी जेब में ! उसे बड़े जोर की भूख भी लग रही थी। हलवाई की दूकान पर कुछ खरीद कर खाना चाहता था। पर पास फूटी कौड़ी भी न थी । दूकान के पास जाकर वह खड़ा हो गया और दूर से ललचाई अँखों से देखता रहा । हठात उसकी नजर दूकान की अलमारी में लगे हुए आइने पर पड़ी। आइने में वह अपनी सूरत देखना चाहता था। पर लाख ऊपर-नीचे, दाएँ-बाएँ सरकने पर भी उसे अपना रूप नहीं दिखाई दिया। और जो रूप वह देखता था, वह नारायण का था! वह चक्कर में पड़ गया। पहले तो उसे अपनी अँखों पर विश्वास न हुआ। सिर

झुका कर अपने पैरों की ओर देखा। पैर बहुत छोटे हो गए थे। जूते भी नहीं थे। धोती के बदले पैंट पहने था। झट उसने अपने सिर पर हाथ रख कर देखा। गञ्जे सिर पर चिकने मुलायम बाल कहाँ से आ गए ? गालों पर हाथ फेरा--भरे और चिकने, मूँछ लापता ! दाढ़ी सफाचट, जैसे कभी वहाँ बाल ही नहीं उगे हों ! चश्मे का कहीं पता नहीं; उसकी जरूरत भी न थी। अब राजाराम समझ गया कि उसे नारायण का रूप मिल गया है। फिर तुरन्त मन में हुआ- "और नारायण का क्या हाल है ?" यह सोचते ही उसे बड़ा डर लगा।

* * * * *

अब हम जरा देखें कि इधर नारायण का क्या कर रहा है ? जब उसे निश्चय हो गया कि उसके पिता बाहर चले गए तो वह हाथों और पैरों से दरवाजा पीटने लगा। पीटते-पीटते उसे दर्द होने लगा। आवाज सुन कर महाराजिन आई और किवाड़ खोल कर बोली-"हाय ! हाय ! बाबूजी ! आपको किसने कमरे में बन्द कर दिया था ? कहीं नारायण ने तो यह शरारत न की थी ?"

'चुप रह !' नारायण ने क्रोध से कहा। सहारा जिन को बड़ा दुख हुआ। नो मालिक उसे कभी कुछ नहीं कहते थे, आज यों नाराज क्यों हो रहे हैं ! उस बेचारी को क्या मालूम कि वह राजाराम नहीं, नारायण है !

नारायण जल्दी जल्दी सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर जाने लगा। उसे मालूम था कि पिताजी पैसे कहाँ रखते हैं ? लेकिन वह सीढ़ियाँ जल्दी जल्दी नहीं चढ़ सका। आज उसकी सारी देह थकावट से भारी जान पड़ती थी। पैर तो पत्थर जैसे हो गए थे। दो तीन सीढ़ियाँ चढ़ते ही मुँह के बल गिर पड़ा। बड़ी चोट आई। घुटने छिल गए। किसी तरह कराहते हुए ऊपर चढ़ा तो पैरों ने जवान दे दिया था । दम फूलने लगा था। "अच्छा ! कुछ जलपान करके तब बाहर जाऊँगा। अभी





तो बहुत थक गया हूँ।" नारायण ने सोचा और महाराजिन को जलपान लाने का हुक्म दिया।

महाराजिन एक कटोरी में जलपान ले आई। लेकिन आते ही उसने कहा- "अभी तो आपने जलपान कर लिया था ! फिर खाइएगा तो कहीं पेट में दर्द न हो जाय!"

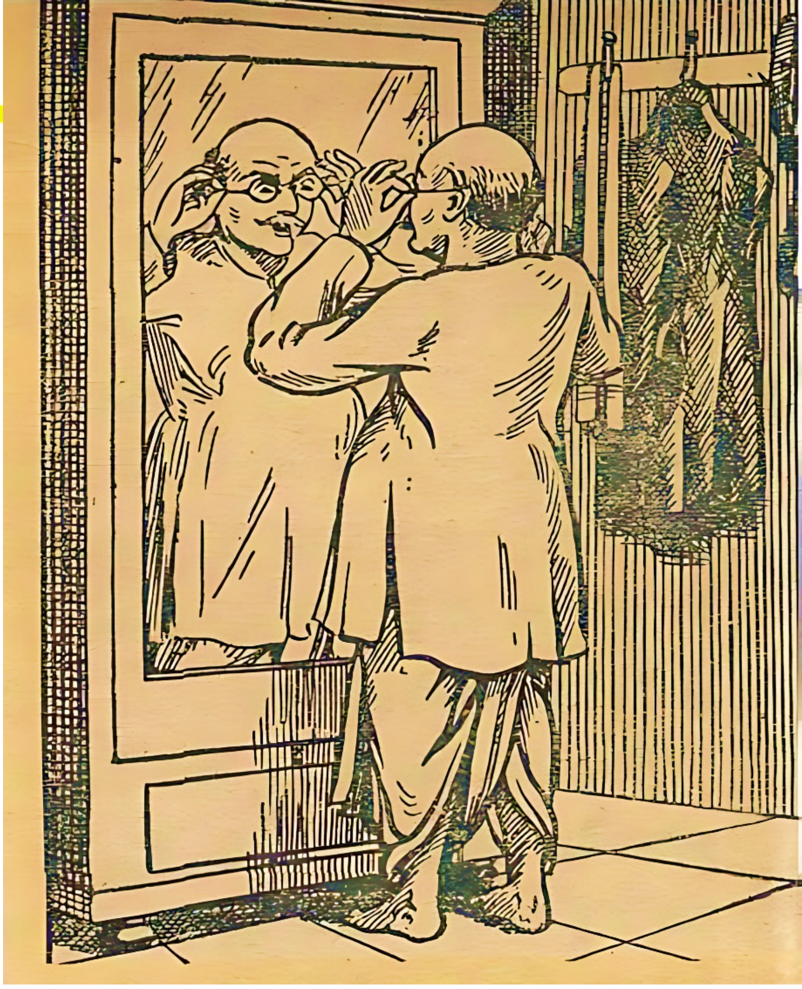
"कलमुँही कहीं की ! मुझे तूने जलपान कब दिया था ? मैंने तो यों ही पेट के दर्द का बहाना किया था। मेरी कचौड़ियाँ मुझे देने में तेरी जान क्यों जा रही है ? रख दे कचौड़ियाँ वहाँ !" नारायण ने चिल्ला कर कहा। महाराजिन को अपने कानों पर विश्वास न हुआ। उसे शक हुआ कि जरूर मालिक का दिमाग बिगड़ गया है। उसने तुरन्त नौकर के जरिए वैद्य को बुला भेजा।

अच्छा ही हुआ कि वैद्य तुरन्त आए। क्योंकि कचौड़ियाँ खाते ही नारायण के पेट में शूल पैदा हुआ। वह बिस्तर पर बेचैनी के मारे लोटने लगा। वैद्य ने आकर उसे दवा दी और सबेरे लेने के लिए जुलाब की दो गोलियाँ भी देकर चला गया।

वैद्य ने जब उसे "आप" कह कर पुकारा तो नारायण को बड़ा अचरज हुआ। थोड़ी देर में जब पेट का दर्द कम हो गया तो नारायण उठा और चाभियाँ लेकर अलमारी खोलने चला। लेकिन नजदीक जाते ही वह चौंक पड़ा। क्योंकि उसे अलमारी में अपने पिता की परछाई दिखाई पडी। "बाप रे बाप !" कह कर नारायण पीछे फिर कर देखा । लेकिन उसके पिता वहाँ कहाँ थे ? उसने फिर आइने में देखा। परछाईं फिर दिखाई दी। वही गञ्जा सिर, वही मूँछें और चश्मा! तब उसने अपना मुँह टटोल कर

देखा। बस, अब उसे सारा रहस्य मालूम हो गया ।

नारायण का सिर घूमने लगा। जाने कैसे, उसे पिता की देह मिल गई थी। पहले तो उसे बड़ा सोच हुआ । लेकिन कुछ सोचने पर उसे बड़ी खुशी हुई। क्योंकि अब उसे स्कूल जाने की जरूरत न पड़ेगी। मास्टर के हाथ मार खाने के मौके नहीं आएँगे। अब वह जो चाहेगा खा सकेगा। जहाँ चाहेगा जा सकेगा। और पैसे ! उसे अब पैसे की क्या कमी थी ? वह खुशी से उछलने लगा। पर उछलते ही धम से गिर पड़ा। मुश्किल से उठा और सोचने लगा-"उसके पिता कहाँ हैं? वे किस रूप में हैं ?" यह सोचते ही मानों उसे जवाब भी मिल गया-जीने पर किसी के पैरों की आहट हुई। एक दस- बारह साल का लड़का सीढ़ियाँ चढ़ रहा था। नारायण ने गौर से देखा। क्या वही उस के पिता जी हैं ? लेकिन नहीं; यह तो उसी का प्रति-रूप था। तुरन्त उसे मालूम हो गया कि उसके पिता को ही उसका रूप



मिल गया है। यह समझ में आते ही उसे एक तमाशा सूझा। उसने चाभियाँ अपनी जेब में छिपा ली। राजाराम ऊपर आया और जब उसने अपने बेटे का रूप देखा तो उसे बड़ी हँसी आई। वह जोर-जोर से ठठा कर हँसने लगा। लेकिन नारायण चुपचाप देखता रहा । उसे डर लगा। "क्या तुम जानते हो कि हम दोनों में क्यों इस तरह अदला-बदली हो गई है ?" राजाराम ने बेटे से पूछा।

"मुझे नहीं मालूम !" नारायण ने मुँह लटका लिया।

"यह तो बड़ी मुश्किल हो गई ! अब हम समाज में क्या मुँह दिखाएँगे ? लोग कैसे विश्वास करेंगे कि मैं राजाराम हूँ और तुम्हीं नारायण हो ! मुझे घर का सारा काम-काज देखना होगा। लोगों से मिलना होगा। रुपए पैसे का मामला भी है। सारे गाँव में दोस्त भी हैं। उनसे मिलते रहना होगा । मैं यह देह लेकर ये सब काम कैसे करूँ? कैसे उनको समझाऊँ कि मैं ही राजाराम हूँ ? अगर वे मान भी गए तो पहले की तरह कैसे पेश आएँगे ?" राजाराम ने चिन्तित होकर कहा।

"मैं क्या जानूँ ?" नारायण ने मुँह बिगाड़ कर कहा।

"इसके अलावा अब तुम्हारी पढ़ाई कैसे चलेगी ?" राजाराम ने पूछा।

"पढ़ाई ! तो क्या आप चाहते हैं कि मैं यह देह लेकर स्कूल जाया करूँ ? भली रही यह तो !" नारायण ने कहा।

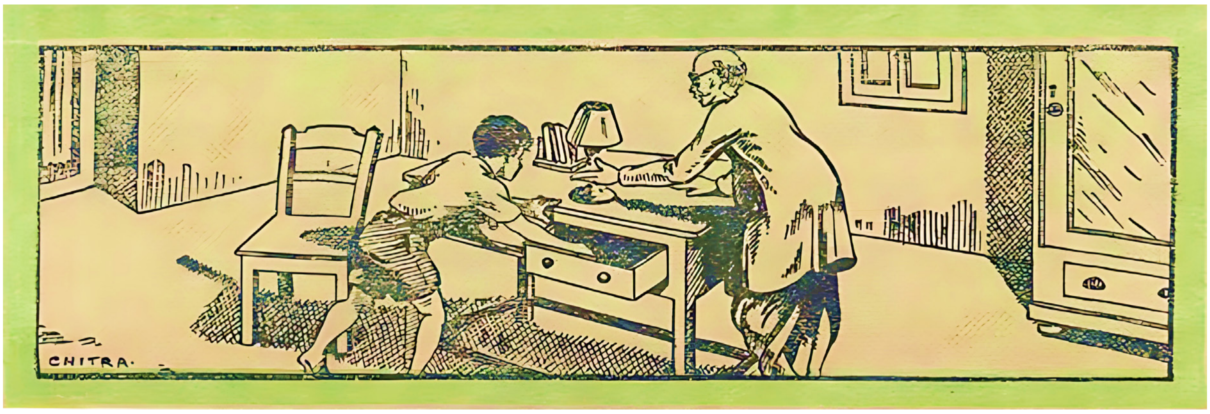
"तब क्या किया जाए ? तुम्हीं बताओ न ! तुम स्कूल जाओ या न जाओ ! जो तुम्हारी मरजी हो करो। पढ़ोगे नहीं तो मेरा क्या बिगड़ेगा ? मुझे तो घर का काम-काज करना ही पड़ेगा !" यह कहते हुए राजाराम कोई चीज ढूँढ़ने लगा।

नारायण खूब जानता था कि उसके पिता अलमारी की चाभी ढूँढ़ रहे हैं। लेकिन वह कुछ न बोला। "अलमारी की चाभी कहीं देखी है तुमने ?" उसके पिता ने सिर उठा कर पूछा।

"मैंने ले ली है।" नारायण ने नवाब दिया।

"तुम क्यों लोगे उसे ! लाओ ! मुझे दे दो !" राजाराम ने कहा।

[सशेष]





बहुत दिन पहले सोमनाथ नामक लड़के ने जाम्बवान के लिए तप किया। लेकिन जाम्बवान जल्दी प्रसन्न न हुए। बात यह हुई कि उन्हें मालूम ही नहीं था कि सोमनाथ नाम का लड़का उनके लिए तप कर रहा है। ब्रह्मा, विष्णु या शिवजी होते तो तुरन्त प्रसन्न होते और वरदान देते। क्योंकि वे जानते हैं कि पृथ्वी पर कौन कहाँ तपस्या कर रहा है। जाम्बवान की आराधना करने वाले वैसे होते ही बहुत कम हैं। यह उनके लिए नई बात थी। इसलिए सोमनाथ की तपस्या की बात उन्हें देर से मालूम हुई। पता चलते ही वे तुरन्त उसके सामने पहुँच गए। सोमनाथ ने जब आँखें खोल कर जाम्बवान को अपने सामने खड़ा देखा तो भक्तिपूर्वक दण्डवत करके स्तुति करने लगा -"हे भालू राजा ! ब्रह्मा ने जम्हाई ली तो आप उनके मुँह से पैदा हो गए। मौत आप का कुछ भी नहीं कर सकती। आपने भगवान रामचन्द्र की सेवा करके सब से ज्यादा नाम कमाया। भगवान कृष्ण के तो आप ससुर ही हो गए। आप सिर से लेकर पैरों तक रोम-राजि से ढँके हुए हैं। अब मेरी तपस्या का कारण सुनिए। आप के शरीर के लम्बे बालों को देख कर ही मुझे तप करने की सूझी। मैं ऐसा वर चाहता हूँ जो आप आसानी से दे सकते हैं। आप मेरे मामू रामनाथ के दोनों कानों में बालों के दो घने गुच्छे उगा दीजिए। इसके सिवा मैं और कुछ नहीं चाहता।" सोमनाथ ने कहा।

जाम्बवान के अचरज का ठिकाना न रहा। उन्होंने दिमाग लड़ाया। लेकिन सोमनाथ की इस वर याचना का रहस्य उनकी समझ में न आया। आखिर उन्होंने पूछा-"मेरे प्यारे भक्त ! पहले मुझे यह बता दो कि तुम यह वर क्यों चाहते हो ?"



"भगवन! आप मुझे क्षमा करें। यह तो मैं आपको नहीं बता सकता। क्योंकि इसमें बड़ा भारी रहस्य छिपा हुआ है।" सोमनाथ ने जवाब दिया।

"अच्छा, तो जाने दो। मैं तुम्हें वर देता हूँ- एवमस्तु। तुम्हारे मामू रामनाथ के कानों में बालों के दो गुच्छे उग आएँगे।" यह कह कर जाम्बवान अदृश्य हो गए।

सोमनाथ खुशी खुशी अपने घर लौट आया। उसके माँ-बाप ने उसे देख कर अत्यन्त आनन्द से पूछा-"बेटा! तुम इतने दिन तक कहाँ थे ? अचानक किसी से बिना कुछ कहे-सुने तुम घर से इस तरह क्यों गायब हो गए ?" उनकी खुशी का ठिकाना न था।

लेकिन सोमनाथ ने उनके सवालों की झड़ी से किसी तरह बच कर पूछा- "यह सब पीछे बता दूँगा। पहले यह तो बता दो कि मामू कहाँ हैं ?"

"तुम्हें ढूँढ़ते हुए गाँव-गाँव भटकते रहे। आखिर निराश होकर घर लौट आए। थकावट के मारे कमरे में पड़े सो रहे हैं।" उसके माँ-बाप ने कहा।

सोमनाथ ने तुरन्त दौड़ते हुए उस कमरे में जाकर देखा। उसके मामू चटाई पर पड़े सो रहे थे और जाम्बवान के वर के अनुसार उनके दोनों कानों में बालों के दो घने गुच्छे उग आए थे।

सोमनाथ ने उतावली से उन दोनों गुच्छों को हाथ से एक बार छूकर देखा। वह खुशी के मारे उछल पड़ा।

शोर-गुल सुन कर रामनाथ की नींद टूट गई और उसने आँखें मलते हुए पूछा-"कौन ! सोमनाथ ? कब आया तू ? इस तरह उछल क्यों रहा है ?"

"मामू ! पहले जरा अपने कान तो टटोलो तुम ! बातें करना पीछे!" सोमनाथ ने कहा।

उसके मामू ने जब कान टटोले तो उसमें कास की जड़ की तरह गुच्छेदार बाल मालूम हुए। वह अचम्भे में पड़ गया। उसका दिमाग चक्कर खाने लगा। सोमनाथ के माँ-बाप भी बहुत चकित हुए कि रातों-रात कानों में बाल कहाँ से आ गए! सोमनाथ ने कहा -"मामू ! तुम्हारे कान में जो बाल हैं, उनके सामने श्यामनाथ के मामू कामनाथ के कानों के बालों की क्या गिनती ? उसके बालों से तुम्हारे बाल दो गुने घने और चार गुने लम्बे हैं ! अब जरा हिसाब तो लगाओ ? श्यामनाथ की दौलत से आठ दस गुना ज्यादा दौलत मुझको मिलेगी !" यह कह कर वह फिर उछलने-कूदने लगा ।

"आठ-दस गुना दौलत तुम्हें कैसे मिलेगी रे?" रामनाथ ने पूछा।

"जैसे कामनाथ के कानों में बाल रहने से श्यामनाथ धनवान बन गया, वैसे ही !" सोमनाथ ने कहा।



मामा के कानों के बालों से भांजे की दौलत का क्या सम्बन्ध है ? यह रामनाथ की समझ में न आया । इसलिए वह तुरन्त श्यामनाथ के घर चल दिया। उसे डर हो गया कि कानों के बाल कोई देखेगा तो तरह तरह के सवाल करने लगेगा। इसलिए वह एक गमछा सर में लपेट कर चला जिससे कान ढकें रहें । श्यामनाथ के घर जाकर उसने पूछा-"मेरा भाँजा इस बीच न जाने कहाँ कहाँ घूम आया है। जब से आया है, वह यही रट लगाए है कि जिस तरह कामनाथ के कानों के बालों के द्वारा

श्यामनाथ धनवान बन गया उसी तरह तुम्हारे कानों के बालों द्वारा मैं भी धनवान बनूँगा बोलो, यह कहाँ तक ठीक है ?"

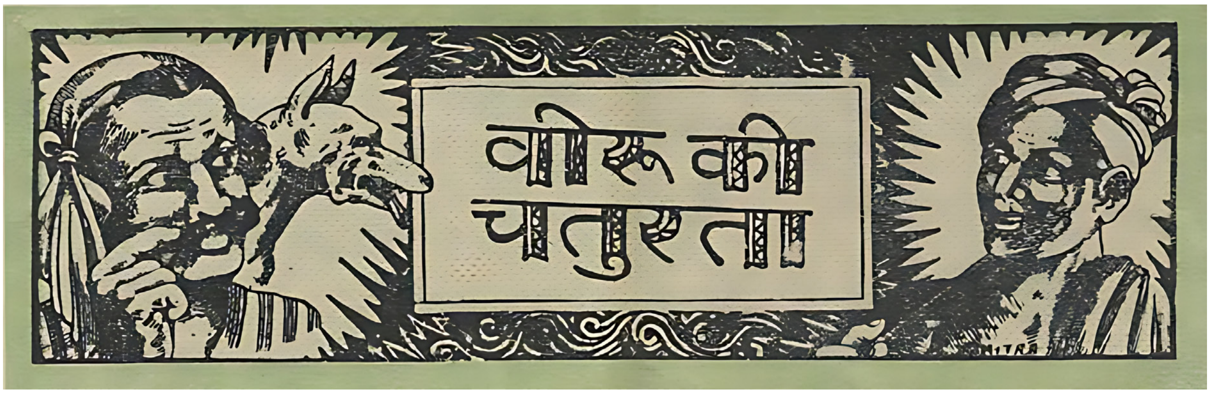
तब श्यामनाथ ने पूछा-"क्या तुम्हारे कानों में बाल हैं ?"

"पहले नहीं थे। लेकिन आज जो उठा और कान टटोले, तो मालूम हुआ कि उसमें घने बाल हैं।" यह कह कर रामनाथ ने गमछा खोल कर उसे दिखा दिया।

यह देख कर श्यामनाथ अचरज में पड़ गया और बोला -"सच्ची बात यह है। सुनो - एक दिन तुम्हारे भांजे ने आकर मुझ से पूछा -'तुम इतने धनवान कैसे बन गए?' तब मैंने बताया कि बाप-दादे जो जायदाद छोड़ गए थे, उसे मैंने और भी बढ़ा लिया है। लेकिन इस जवाब से उसे सन्तोष न हुआ। वह हर रोज आकर मुझसे वही सवाल करने लगा । आखिर तङ्ग आकर मैंने सोचा कि इससे कैसे पिण्ड छुड़ा लूँ ! इतने में मुझे याद आया कि मेरे मामू के कानों में भी बाल हैं। बस, मैंने कह दिया- 'मेरे मामू के कानों में बाल हैं। इसी से मैं इतना धनवान हो गया हूँ।' उसके बाद तुम्हारा भाँजा न जाने कहाँ चला गया और मुझे फिर नहीं दिखाई पड़ा।"

यह सुन कर बेचारा रामनाथ घर लौट आया । घर आकर अपने भांजे को फुसला- उसला कर उसने जाम्बवान के वरदान की बात जान ली। तब वह सिर धुनने लगा । सोमनाथ बहुत दिन तक राह देखता रहा कि वह शीघ्र ही बहुत धनवान हो जाएगा। लेकिन अन्त में निराशा ही उसके हाथ लगी।





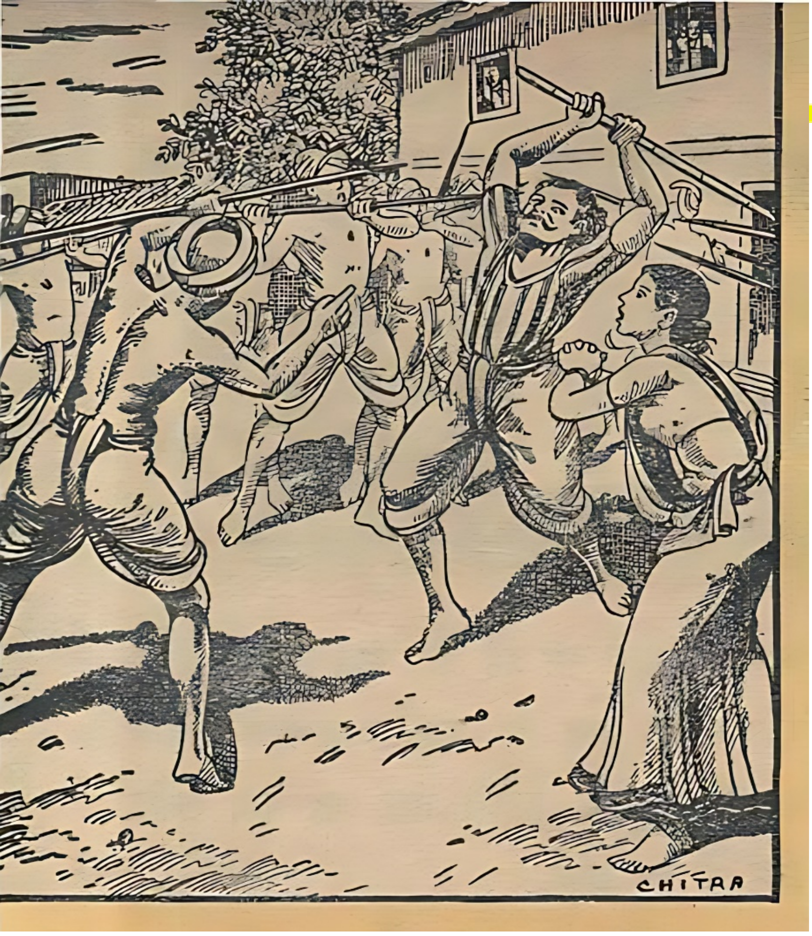
बासवाडी नामक गाँव में सोहन नाम का एक बड़ा नामी पहलवान रहता था। वह बड़ा अखाड़िया था। इसलिए गाँव वाले सभी उससे डरते थे। इसमे वह गाँव वालों को और भी खिझाता रहता था।

उसके पास एक शिकारी कुत्ता था। यह इतना डरावना था कि एक बार सूरत देख लेने पर कोई उसे न भूल सकता था। तिस पर तुर्रा यह कि वह उसे कभी जञ्जीर से बाँध कर नहीं रखता था। पड़ोस के लोगों ने कई बार उसमे विनती की कि "भई ! तुम उसे खुला न रखा करो। उसे उसे देख कर बच्चे सहम जाते हैं। कभी किसी को काट लिया तो ? इसलिए उसे जञ्जीर से बाँध कर रखो।" लेकिन वह मूर्ख किसी की क्यों सुनने लगा ? उसे और भी घमण्ड हो गया कि लोग मेरे पास आकर बिनती कर रहे हैं। अब लाचार होकर गाँव वाले मन ही मन भगवान से प्रार्थना करने लगे कि किसी तरह यह बला उनके सिर से टल जाए।

कुछ दिन बाद मजदूरों का एक जत्था उस गाँव में तालाब खोदने आया। वे हाथों में खुरपी, कुदाल और टोकरियाँ लिए हुए पहलवान सोहन के घर से गुजर रहे थे कि उन्हें देख कर सोहन का कुत्ता भोंकता हुआ जोर से काटने दौड़ा।

वीरू नाम के मजदूर ने जो जत्थे में सबसे पीछे चल रहा था यह देखा और उसे धमका कर भगाना चाहा। लेकिन वह कुत्ता रुका नहीं। दौड़ कर झट उस पर उछला और उसे काट खाना चाहा।

अगर पल भर भी देरी हुई होती तो वह कुत्ता जरूर उसको काट लेता।



लेकिन वीरू बिजली की गति से कतरा गया और कुदाल उठा कर उस पर दे मारा। कुत्ते के सिर पर चोट लगी और खून निकल आया।

कुत्ता कें-कें करता गिरा और उठ कर मालिक के पास भाग गया। कुत्ते को घायल देख कर सोहन का पारा चढ़ गया। वह झट लाठी उठा कर सड़क पर आ गया और गरज कर बोला- "कुत्ते को किसने मारा है?"

"मैंने" कहता बीरू सामने आया। बस, सोहन ने न आव देखा न ताव; लाठी चला दी। अगर वीरू कुदाल पर लाठी न झेल लेता तो उसका सिर चूर चूर हो जाता। इतने में हो-हल्ला सुन कर बहुत लोग वहाँ दौड़े आए।

यों वार खाली जाते देख कर सोहन झल्लाया और दुबारा लाठी उठाई। लेकिन अब तक सभी मजदूरों ने अपनी अपनी कुदालें उठा ली थीं।

"चल दे चुपचाप यहाँ से! नहीं तो बस काट कर यहीं गाड़ देंगे।" वीरू ने गरज कर कहा।

पड़ोसी सभी वहीं देखते हुए खड़े थे। वे सोहन का अपमान होते देख कर मन ही मन फूले न समा रहे थे। उन्हें क्या पड़ी थी कि वे सोहन का पक्ष लेने जाते ! इतने में सोहन की पत्नी रोती-धोती घर से दौड़ी आई और मजदूरों से कहने लगी कि वे उसके पति की जान छोड़ दें और उसका सुहाग रख लें।

अब मजदूर सभी शान्त हो गए और अपनी राह पर चले गए। सोहन घर में जाकर कहने लगा कि "कुत्ते को मारने

बाले पर मैं जरूर मुकदमा चलाऊँगा।" उसकी स्त्री ने उसे बहुत समझाया- बुझाया-"जो हो गया सो हो गया। अब चुप रह जाओ।" लेकिन उसने कुछ नहीं सुना। क्रोध में अकड़ कर उसने वीरू पर फ़ौजदारी दायर कर दी। मामले की तहकीकात करने के लिए दारोगा साहब उस गाँव में पधारे।

दारोगा का नाम सुनते ही मजदूर डर गए। लेकिन वीरू ने कहा-"हमने तो कुछ गुनाह नहीं किया है। फिर हम डरें क्यों ?"

"धर्म-अधर्म कौन सोचता है ?ले जाकर पहले जेल में ठूँस देंगे।" लोगों ने एक स्वर से कहा।

तब उसने जवाब दिया-"अच्छा! अगर जेल ही जाना पड़ा तो क्या हर्ज है ? कुछ दिन वहीं रह आऊँगा। देखूँगा, वहाँ की आब-हवा कैसी होती है ? यहीं कौन राज-सुख भोग रहा हूँ ?"

यह सुन कर सब लोगों ने वीरू के धीरज को दिल खोल कर सराहा।



गाँव के सब लोग चौपाल में जमा हुए। दारोगा साहब ने पूछा-"क्यों वीरू ! तुमने सोहन पहलवान के कुत्ते को कुदाल से घायल किया है ? बोलो, यह बात सच है कि नहीं?"

"बात तो झूठी नहीं है !" वीरू ने बिना आगा-पीछा किए कह दिया।

"तुमने उस बेगुनाह जानवर को क्यों ऐसे मारा ? सोहन ने उस कुत्ते को सौ रुपए में खरीदा था। वह रोज उसको दो सेर गोश्त देता और दो सेर दूध पिलाता था। ऐसे कुत्ते को अकारण तुमने क्यों मारा?" दारोगा साहब ने पूछा।

तब बीरू ने कहा-"हुजूर ! मेरी बात सुनिए ! मैंने उसे अकारण नहीं मारा। वह मुझे काटने दौड़ा तो मैंने अपने-आपको बचाने के लिए उसे मारा।"

तुरन्त सोहन ने चिल्ला कर कहा- "नहीं ! नहीं ! यह झूठ बोलता है। अगर इसने अपने बचाव के लिए उसे मारा तो इसे कुदाल की मूँठ से उसे मारना चाहिए था। तब यह बच भी जाता और मेरे कुत्ते को ज्यादा चोट भी न लगती।"

तब बीरू ने हँसते हुए कहा -"हुजूर ! इसका कुत्ता मुझे मुँह से काटने दौड़ा; पूँछ से नहीं। अगर वह पूँछ से कटने दौड़ा होता तो मैं भी उसे मूँठ से मारता।"

उसका जवाब सुन कर दारोगा साहब को हँसी आ गई। दारोगा के हँसते ही जो जो लोग वहाँ तमाशा देखने आए थे सब-के-सब ठठा कर हँसने लगे। अगर किसी के मुह पर हँसी न थी तो वह सोहन के मुँह पर।

दारोगा साहब ने बीरू की चतुरता से खुश होकर फ़ैसला दिया-"सोहन ! तुम्हारा कहना गलत साबित हुआ। जब जान पर आ बनती है तो कोई यह सोचते बैठा नहीं रहता कि उसे हथियार के किस सिरे से बचाव करना चाहिए। अगर वीरू ने ऐसा ही किया होता तो वह मेरे सवालों का जवाब देने के लिए यहाँ जिन्दा न खड़ा रहता। हाँ, आज से तुम अपने कुत्ते को जञ्जीर से बाँध कर रखा करो।"

यह सुन कर सोहन मुँह लटकाए वहाँ से चला गया। वीरू को बहुत खुशी हुई। लेकिन सबसे ज्यादा खुशी हुई गाँव वालों को। अब उन्हें उस भयङ्कर कुत्ते से कोई खतरा न था।

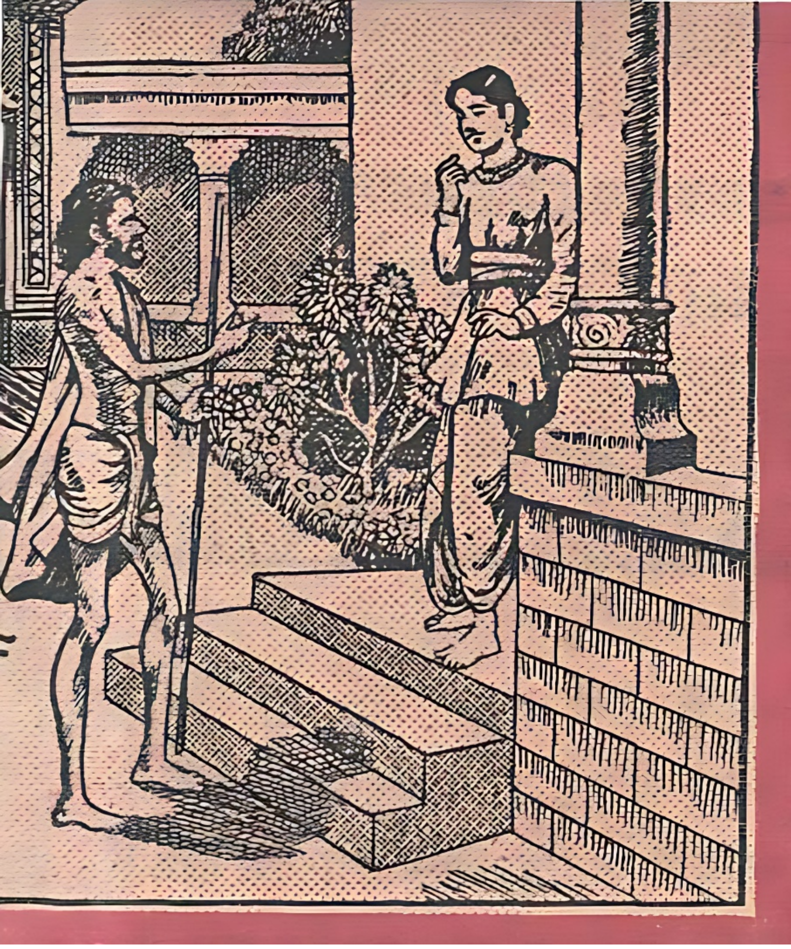




बहुत दिन पहले काञ्चनदत्त नाम का एक धनवान रहता था। उसे खुद अन्दाज नहीं था कि उसके पास कितना धन है ? लेकिन यों धन-दौलत में लोटते रहने पर भी उसके मन को सन्तोष न था। इसलिए काञ्चनदत्त हमेशा यह सोच कर दुखी रहता -"संसार में जितने सुख कहे जाते हैं सब मेरी मुठ्ठी में हैं। लेकिन उनसे फायदा क्या ? जब मन में शान्ति और सन्तोष नहीं तो जिन्दगी में चैन कहाँ ?" ऐसा सोचते-सोचते काञ्चनदत्त दिन-दिन चिन्ता में घुलने लगा।

उन्हीं दिनों एक रात काञ्चनदत्त ने एक सपना देखा। उस सपने में एक बूढ़ी ने उसके सामने आकर कहा-"काञ्चनदत्त ! भगवान ने तुम्हें सब सुख दिए हैं। फिर तुम क्यों इस तरह चिन्ता में घुले जा रहे हो ? सुनो, यहाँ से ठीक चालीस योजन की दूरी पर कैलास पहाड़ है। उस पहाड़ पर हीरों के बगीचे में सोने का महल है। उस महल के फाटक पर दो पहरेदार पहरा देते रहते हैं। अगर तुम उनको खुश कर सको तो वे उस महल में रहने वाले देवता से तुम्हारी सिफारिश कर देंगे। तब देवता तुम्हें एक दिव्य मञ्जूषा देंगे। उसको घर लाकर अपने पास रखो। जब तक वह पेटी तुम्हारे घर में रहेगी तब तक तुम्हारे मन में सुख और शान्ति बनी रहेगी।" यह कह कर वह बूढ़ी अन्तर्धान हो गई।

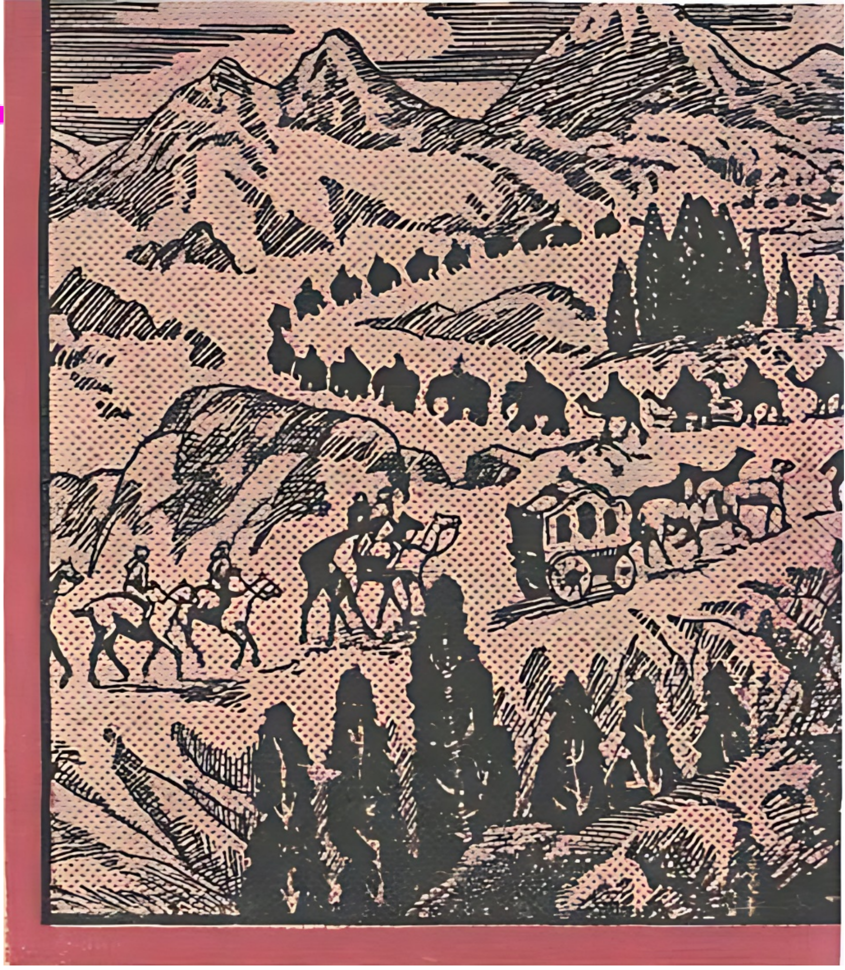
काञ्चनदत्त ने उस समय उस सपने पर और बूढ़ी की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह चुपचाप करवट बदल कर सो रहा। लेकिन दूसरी रात फिर उसी बूढ़ी ने सपने में कहा-"क्यों काञ्चनदत्त ! क्या तुम्हें मेरी बातों



पर विश्वास नहीं हुआ ? तुम कैलास क्यों नहीं गए ? सुनो, तुम जरूर वहाँ जाओ। खाली हाथ जाने से कोई फायदा नहीं होगा। सोने के महल के पहरेदार सिर्फ करोड़पतियों की ही कदर करते हैं। इसलिए तुम अपने धन का अधिकांश ले जाकर उन्हें दे दो। तभी वे देवता से तुम्हारी सिफारिश करेंगे।" यह कह कर बूढ़ी अदृश्य हो गई।

काञ्चनदत्त के मन में हुआ कि वह इस बूढ़ी की बातों को जाञ्चे तो सही। लेकिन वह सुस्ती कर रह गया। आखिर तीसरी रात भी जब बूढ़ी ने सपने में आकर उसे समझाया बुझाया तो वह चुप न रह सका। दूसरे दिन उसने सारे शहर में ऐलान करा दिया कि जो कैलास पर्वत पर जाकर दिव्य मञ्जूषा ले आएगा उसे मैं मुँह माँगा ईनाम दूँगा। बहुत दिन बीत गए। पर कोई ऐसा सूरमा आगे न आया जो कैलास जाकर वह पेटी ले आता।

एक दिन एक भिखमंगे ने आकर काँचनदत्त से भीख माँगी और कहा कि वह दिव्य-पेटिका पाने का उपाय बता सकता है। यह सुन कर काञ्चनदत्त को बड़ी खुशी हुई। उसने बहुमूल्य हीरे-जवाहरात एक बटुए में डाल लिए और एक सौ बोरों में सोने चाँदी की ईंटें भर कर उन्हें एक सौ हाथियों पर लदवाया। उस धन की रक्षा के लिए उसने घुड़सवारों की एक पलटन भी साथ ले ली। फिर छः महीनों तक की रसद जमा कर उसने ऊँटों पर लाद ली। सफेद घोड़े जुते हुए, मोतियों की झालरों वाले एक रथ पर सवार होकर बड़े ठाट-बाट से वह कैलास की ओर चला। भिखमंगा उसके साथ चलता राह दिखाता जा रहा था।



इस तरह काञ्चनदत्त अपने दल-बल के साथ तीन महीने तक चल कर एक विशाल मैदान में जा पहुँचा। और थोड़ी दूर जाने पर उसे एक सुन्दर बगीचा दिखाई दिया। भिखमंगे ने उसे वहाँ ठहरा कर कहा-"काञ्चनदत्त ! तुम यहीं मेरी राह देखो। मैं पहले वहाँ जाकर सोने के महल के पहरेदारों को तुम्हारे आने की खबर दे आता हूँ।" यह कह कर वह चला गया।

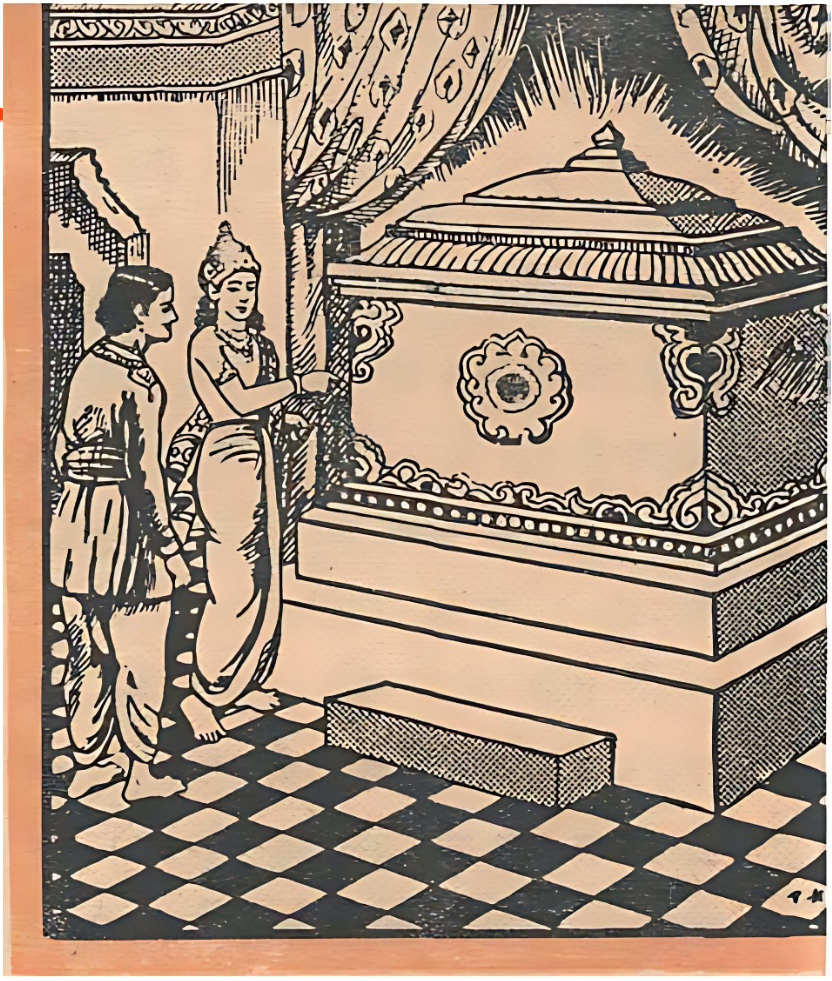
सारा दिन बीत गया। लेकिन भिखमंगा लौट कर नहीं आया। बेचारे काञ्चनदत्त को कभी इस तरह दूसरों की प्रतीक्षा करने की आदत नहीं थी। इसलिए एक पेड़ के नीचे पड़े पड़े उसने रात काटी। सवेरा हो गया और सूरज निकला। काञ्चनदत्त की नींद टूट गई। जब उसने आँखें खोल कर देखा तो मालूम हुआ कि वह सारा प्रदेश जगमग जगमग कर रहा है। ज्यों ज्यों दिन चढ़ता गया त्यों-त्यों वह जगह विचित्र प्रकाश से भरने लगी। काञ्चनदत्त ने गौर से देखा तो मालूम हुआ कि वह जिस पेड़ के नीचे पड़ा हुआ है उसका तना चाँदी का है और पत्ते सोने के। उसके फूलों और फलों में जड़े हुए जवाहिर झलमल कर रहे थे। यह देख कर उसका सर चकराने लगा। पेड़ पर चढ़ कर उसने एक फल तोड़ा और हाथ में लेकर जाँचने लगा। सारी जायदाद बेच देने पर भी कहीं वह ऐसा फल खरीद नहीं सकता था। तब उसने सोचा-"इस बाग की सम्पदा के आगे मेरी दौलत किस गिनती में है ? ऐसी हालत में मैं इतनी मेहनत करके सोने-चाँदी के जो बोरे पहरेदारों की भेंट करने लाया हूँ क्या वे उन्हें मञ्जूर करेंगे ?" यह सोच कर वह मन ही मन बहुत घबराने



इसलिए डरो नहीं। तुम दिव्य-पेटिका ले जाने के लिए आए हो न ! पहरेदारों को खुश करने के लिए तुम सोने-चाँदी के बोरे और हीरे-जवाहरात भी लाए हो?"

तब काँचनदत्त को बड़ा अचरज हुआ कि ये सब बातें इसे कैसे मालूम हो गई ! तब उस दिव्य-पुरुष ने एक नौकर को बुला कर उसे हुक्म दिया कि मेहमान को सारे महल में घुमा कर दिखा लाओ ! नौकर काञ्चनदत्त को एक एक कमरे में ले जाकर दिखाने लगा। उन कमरों की दीवारें सभी सोने की थीं। दरवाजों और खिड़कियों में हीरे-जवाहरात जड़े हुए थे। जहाँ देखो वहीं सोने चाँदी और हीरे-जवाहरों के ढेर भरे पड़े थे। आने-जाने वालों को उन पर पैर धर कर जाना पड़ता था । नौकर ने अन्त में काञ्चनदत्त को एक कमरे में ले जाकर कहा - "इसी कमरे में दिव्य-पेटिका है।" यह कह कर वह गायब हो गया। काञ्चनदत्त उस पेटी को देख कर फूला न समाया। वह पेटी बहुत बड़ी और बहुत भारी थी। उसे पच्चीसों आदमी

लगा। आखिर किसी तरह अपने मन को धीरज देकर वह पेड़ से नीचे उतरा और पैदल ही आगे चला। वहाँ की सारी जमीन सोने की थी। राह के दोनों ओर जवाहरों के पेड़ उगे हुए थे। इस तरह थोड़ी दूर जाने पर उसे सोने का महल भी दिखाई दिया। उस महल के सुन्दर फाटकों पर मोतियों की झालरें लटक रही थीं। फाटक खुले हुए थे। इसलिए काञ्चनदत्त अन्दर चला गया। महल के सामने के कमरे में एक दिव्य-पुरुष रत्न-जटित सिंहासन पर बैठा हुआ था। उसने काञ्चनदत्त को अपने निकट बुलाया और कहा-"हे परदेशी ! मैं तुम्हारा मित्र हूँ।



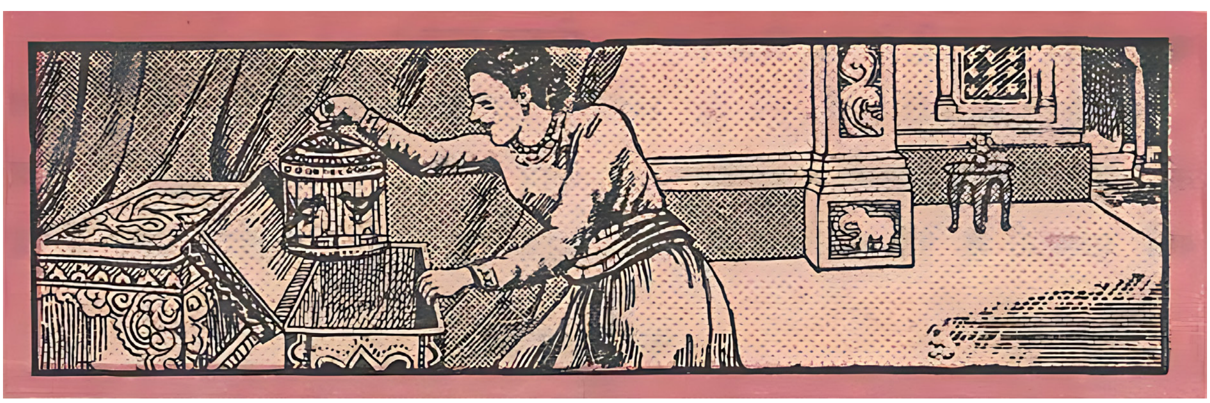
भी एक साथ उठा नहीं सकते थे। काञ्चनदत्त यों खड़ा देख रहा था कि देवता ने सामने आकर कहा -"हे काञ्चनदत्त ! वही दिव्य-पेटिका है। जिस जगह यह रहती है वहाँ सुख-शान्ति का राज रहता है। इसे तुम अपने घर ले जा सकते हो। पर इसे बड़ी सावधानी से रखना। और हाँ, एक बात याद रखना ! घर ले जाकर जब इसे खोलने लगो तो पहले किवाड़-खिड़कियाँ सब बन्द कर लेना।" यह कह कर देवता अन्तर्धान हो गए। तब काञ्चनदत्त ने अपनी लाई हुई भेंट पहरेदारों को अर्पित की और उस पेटी को साथ लेकर घर चला। राह में उसे वही पुराना भिखमंगा दिखाई दिया। उसने कहा-"क्यों जी ! तुम मेरे आने के पहले ही चले गए। ऐसी जल्दी क्या आ पड़ी थी? तुम मेरे आने तक क्यों नहीं ठहरे ? ऐसी उतावली करने से किसी का भला नहीं होता। समझे !" यह कह कर वह गुस्से से चल दिया।

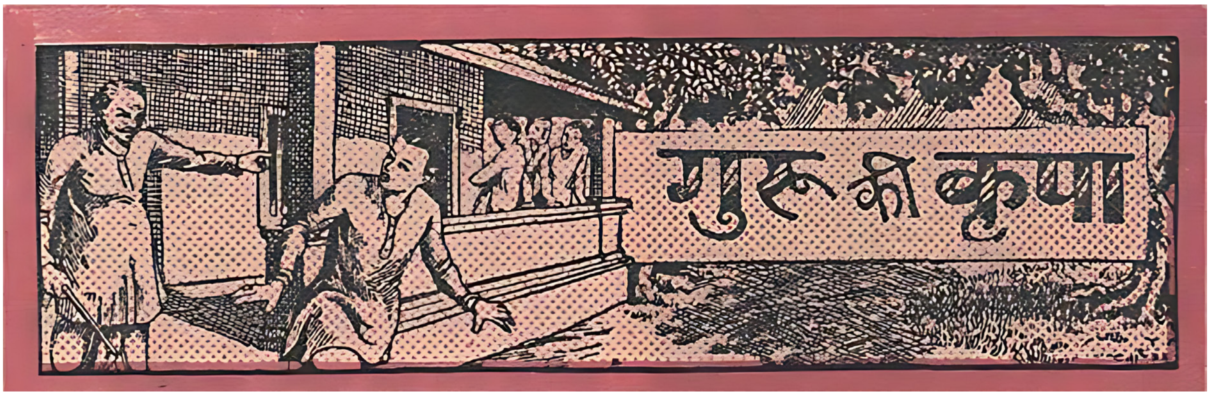
काञ्चनदत्त को बड़ी खुशी हुई कि अब उसे सुख-शान्ति की कमी न रहेगी। वह बड़ी सावधानी से पेटी की रखवाली करने लगा। वह कभी उसे छोड़ कर कहीं न जाता था। रात को भी वह पेटी के नजदीक ही सो जाता था। वह बड़ी बेचैनी से घर पहुँचने की राह देखने लगा। उसके मन में बस, एक ही धुन थी कि कब घर पहुँचू और कब यह पेटी खोल कर देखूँ ? उसे रात रात भर नींद न आती और वह करवटें बदलता हुआ हमेशा पेटी के बारे में ही सोचता रहता।

इस तरह ढाई महीने तक काञ्चनदत्त अपने दल-बल सहित घर की ओर सफर करता रहा। और दस-पन्द्रह दिन में वह

सकुशल घर पहुँचने वाला था। इतने दिनों तक उसने अपने मन पर काबू रखा और पेटी खोलने से बचा रहा। लेकिन एक रात को जब उसके सभी साथी सो रहे थे उसका धीरज छूट गया। उसने उठ कर उस पेटी के पचासों ताले खोल डाले। उस पेटी के अन्दर और एक छोटी पेटी थी। उस पेटी को खोलने पर और एक पेटी दिखाई दी। इस तरह कुल एक सौ सोलह पेटियाँ खोलनी पड़ीं। सब से आखिरी पेटी में एक छोटा सा पिञ्जरा था। उसमें दो नन्हे से पखेरू फुदक रहे थे। एक एक पखेरू के पैरों से एक एक छोटी सी डिबिया बँधी थी। जब काञ्चनदत्त ने उन डिबियों को खोल कर देखा तो एक एक में से एक एक तरह की विचित्र कान्ति- किरनें छूटीं और रात के असमान में विलीन हो गईं। बस, पिञ्जरे के दोनों पखेरू निर्जीव होकर मर गए। वे दोनों शान्ति और सन्तोष के पखेरू थे। काञ्चनदत्त ने भिखमंगे की बात पर ध्यान नहीं दिया और उतावली से वह पेटी खोली। उसकी इस गलती की वजह से सारे संसार के लिए खतरा पैदा हो गया।

अगर देवता के कथनानुसार घर जाकर बन्द कमरे में पेटी खोलता तो उसका भला तो होता ही, साथ साथ संसार का भी उपकार होता। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। इसी से शान्ति और सन्तोष के प्राण-पखेरू उड़ गए और संसार में अशान्ति और असन्तोष का वातावरण फैल गया। आज भी उन शान्ति और सन्तोष के पञ्छियों को फिर से पृथ्वी पर लाकर लोगों के कष्ट दूर करने के लिए बहुत से ऋषि- मुनि हिमालय की गुफाओं में तप कर रहे हैं। कौन जाने, उनकी कठिन तपस्या कब सफल होगी !





सुना जाता है कि किसी गाँव में एक सेठजी रहते थे। सेठजी के चार बेटे थे। एक दिन सेठजी ने अपने चारों लड़कों को बुला कर पूछा -"बच्चो ! धन कमाने का सबसे अच्छा उपाय क्या है ?"

तीन लड़कों ने तीन उपाय बताए। लेकिन चौथे ने कहा-"मुझे धन कमाने की जरूरत ही नहीं ! मैं तो राजा बनूँगा भौर राज करूँगा।"

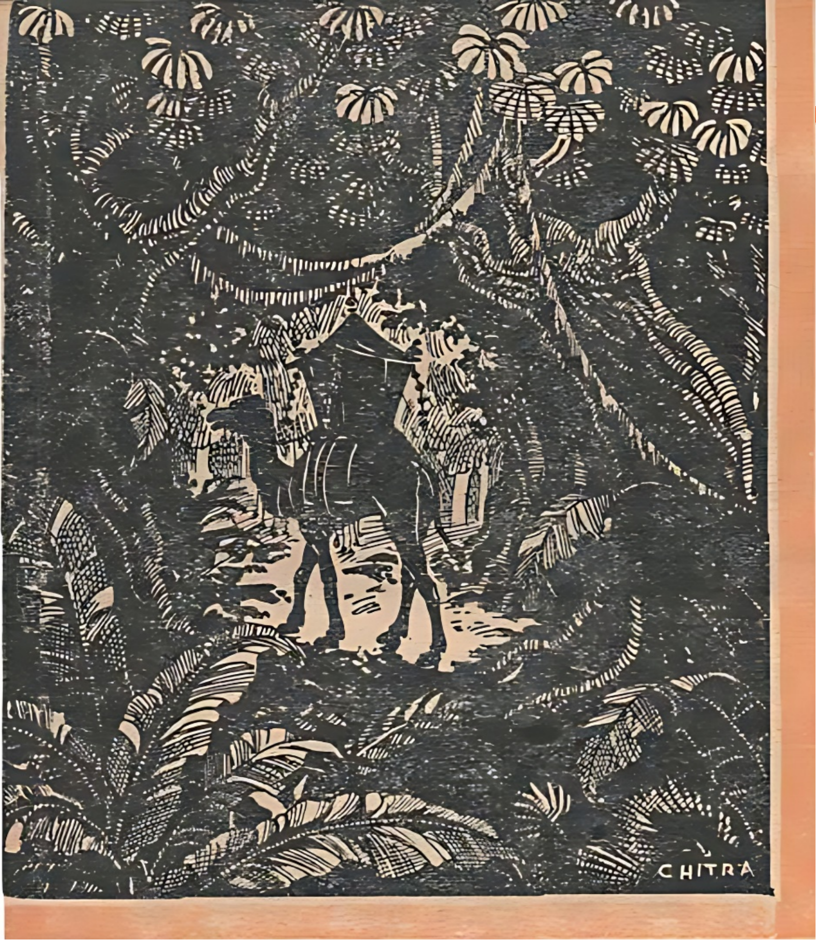
तब पिता को अपने सबसे छोटे लडके श्रीपाल पर बड़ा क्रोध आया और उसने उसे घर से निकाल दिया।

श्रीपाल घर से निकल कर भटकता भटकता नवद्वीप जा पहुँचा। वहाँ एक आश्रम में भरती होकर वह एक गुरू के पास शिक्षा पाने लगा। उसी गुरू के पास रत्नमञ्जरी नामक एक राजकुमारी और एक मन्त्रि - पुत्र भी पढ़ रहे थे।

कुछ दिन बाद रत्नमञ्जरी को मन्त्रि-पुत्र से शादी करने की इच्छा हुई। लेकिन यह मन्त्रि- पुत्र को बिलकुल पसन्द न था। इसलिए वह कोई न कोई बहाना बना कर बार बार टालता आ रहा था। पर एक दिन जब रत्नमञ्जरी ने उससे साफ साफ पूछा तो उससे बहाना बनाते न बना। वह सोच में पड़ गया कि कैसे इस बला से पिण्ड छुड़ाया जाए !

आखिर उसने श्रीपाल को बुला कर कहा-"मित्र ! क्या तुम मेरा एक काम करोगे ? तुम्हें मेरा वेष बना कर राजकुमारी को अपने साथ ऊँट पर चढ़ा कर ले जाना होगा !"

यह सुन कर श्रीपाल ने बिना सोचे-समझे हामी भर दी। उसी शाम को उसने



गुरूजी के पास जाकर कहा-"मैं राजकुमारी से ब्याह करना चाहता हूँ। इसलिए आज रात को ही हम यहाँ से चले जा रहे हैं। आप हमें आशीर्वाद दीजिए।"

यह सुन कर गुरूजी को श्रीपाल के भोलेपन पर बहुत तरस आया। तब उन्होंने सरस्वती देवी की प्रार्थना की। देवी ने तुरन्त प्रत्यक्ष होकर श्रीपाल के मुँह में अपने पवित्र मन्त्र-जल के दो छींटे डाल दिए। तुरन्त श्रीपाल सब शास्त्रों में पारङ्गत हो गया।

रात के अँधेरे में श्रीपाल को मन्त्रि-पुत्र समझ कर राजकुमारी उसके साथ ऊँट पर चढ़ गई। वे एक जङ्गली राह से चले। जब सबेरा हुआ और राजकुमारी ने अपने साथी का चेहरा देखा तो वह बहुत पछताने लगी-"हाय ! अब मैं क्या करूँ? मैं इस उजड्ड मूर्ख के साथ कैसे गृहस्थी चलाऊँगी ?"

उसने गुस्से के मारे उससे बोलना छोड़ दिया। वे दोनों इस तरह कुछ दूर जाकर अमरावती नामक शहर में पहुँचे। उस देश के राजा ने श्रीपाल की चतुरता की जाँच करके उसे अपना मन्त्री बना लिया। श्रीपाल अब राजा को अच्छी सलाह देने लगा।

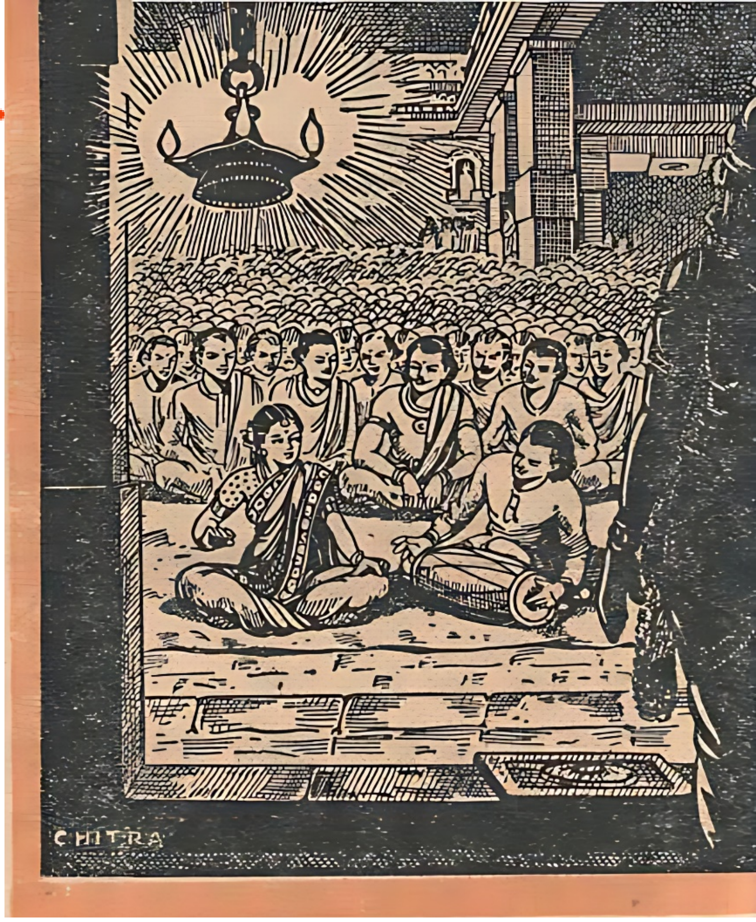
कुछ ही दिनों में उस राज में उसकी बड़ी बड़ाई होने लगी। आस-पड़ोस की औरतें आकर राजकुमारी से उसके पति की बड़ी प्रशंसा करने लगीं। लेकिन राज- कुमारी को उनकी बातों पर विश्वास न होता। वह अब भी श्रीपाल से नहीं बोलती थी।

कुछ दिनों में इस बात की भनक राजा के कानों में पड़ी। उसने सोचा-"यह कैसी बात है ? सारे राज को खुश करने वाला श्रीपाल अपनी स्त्री को खुश नहीं कर सका ? जरूर इसमें कुछ न कुछ रहस्य है!"

यह सोच कर उसने श्रीपाल को बुला कर कहा -"मुझे तुम्हारी श्रीमती जी के हाथ का पका खाने की इच्छा होती है। आज रात में तुम्हारे यहाँ खाना खाने आऊँगा।"

श्रीपाल ने तुरन्त अपनी पत्नी को खबर भिजवा दी। रात को राजा श्रीपाल के घर दावत खाने आया। राजकुमारी भोजन परोसने आई तो वह तीन बार तीन पोशाक बदल कर आई। इसलिए राजा ने समझा कि तीन औरतें खाना परोस रही हैं। वह राजकुमारी की चालाकी न जान पाया। लेकिन वह क्या कर सकता था ? आखिर हैरान होकर घर लौट गया। लेकिन वह मन्त्री की पत्नी का रहस्य जानना चाहता था। इसलिए उसने दूसरे दिन फिर मन्त्री को बुला कर कहा-"मैंने सुना है कि तुम्हारी पत्नी बहुत अच्छा गाती है। मैं शाम को रानी के साथ मन्दिर में जाऊँगा। अपनी पत्नी से कहो कि वह वहाँ एक गाना गाए।"

यह सुन कर श्रीपाल ने फिर अपनी पत्नी के पास खबर भेजी। तब राजकुमारी ने कहला भेजा -"कह दो कि अगर मेरे पति मृदङ्ग बजाएँ तो मुझे गाने में कुछ उज्र नहीं होगा।" श्रीपाल ने उसकी बात मान ली।



उस शाम को राजकुमारी ने मन्दिर में बहुत अच्छा गाया। लेकिन उससे भी बढ़ कर श्रीपाल ने मृदङ्ग बजाया। तब राजकुमारी को अपने पति पर विश्वास हुआ। उसका सारा क्रोध दूर हो गया और वह उससे बोलने लगी।

तब लोगों को इननी खुशी हुई कि उन्होंने उन दोनों को एक सोने की पालकी में बिठा कर सारे शहर में जुलूस निकाला। राजा को भी बड़ी खुशी हुई कि उसके मन्त्री को योग्य पत्नी मिली है। इस तरह गुरु की कृपा से श्रीफल का किसी चीज़ की कमी न रही।



एक समय एक राजा रहता था। वह बहुत बूढ़ा हो गया था। लेकिन बच्चों की भाँति अपनी बरस-गाँठ मनाने में उसे बड़ा आनन्द आता था। जब वह सत्तर वर्ष का हो गया तो उसने सारे शहर को सजाने और सभी सड़कों पर छिड़काव करने की आज्ञा दी। उसने घोषणा कर दी कि उस दिन कोई दूसरा काम न करे। सब लोग धूम-धाम से उसकी वर्ष-गाँठ मनाएँ।

राजा के आज्ञानुसार लोगों ने उस दिन सब काम बन्द कर दिए और खुशी से हँसते-खेलते दिन बिताया। लेकिन ठीकरू चमार उस दिन भी काम करता रहा। जब सिपाहियों ने उसे रोज की तरह जूते बनाते देखा तो वे उसे पकड़ कर राजा के पास ले गए।

"कौन है यह ? इसे क्यों पकड़ लाए हो ?" राजा ने पूछा।

"महाराज ! इसने आपका हुक्म तोड़ा है। राज भर में लोग काम-धन्धा छोड़ कर शान से खुशियाँ मना रहे हैं। लेकिन यह अभागा घर में बैठा काम कर रहा है। इसलिए हम इसे पकड़ लाए हैं।" उन सिपाहियों ने निवेदन किया।

तब राजा ने उस चमार से पूछा-"क्यों ! क्या बात है ? सब लोगों की तरह तुम उत्सव क्यों नहीं मना रहे थे ? घर में बैठे जूते क्यों बना रहे थे ?"

'महाराज ! अगर मैं काम न करूँ तो आज मेरा पेट कैसे भरेगा ? आप तो जानते हैं, हमारी हालत कैसी है ?" ठीकरू चमार ने जबाब दिया।

"तो क्या तुमने अपनी कमाई से कुछ भी बचा नहीं रखा है ? क्या दिन भर की सारी कमाई पाई-पाई खर्च कर देते हो ?

पहले यह तो बनाओ, तुम रोज कितना कमाते हो ?" राजा ने पूछा।

"हुजूर, मैं रोज छः आने कमाता हूँ।" ठीकरू ने कहा।

"छः आने रोज ? फिर क्या ? आजकल दो पैसे में दो सेर अनाज मिलता है। तो तुम्हें पेट पालने के लिए दो आने काफी हैं। बाकी चार आने क्या करते हो ?" राजा ने फिर पूछा। जब राजा ने बार बार यही सवाल किया तो ठीकरू ने कहा- "आधे से कर्ज अदा करता, फिर आधा कर्ज दिया करता !" यह कह कर वह चुप हो गया।

राजा को उसकी बात का रहस्य नहीं मालूम हुआ। इसलिए उन्होंने कहा- "क्या कहा ? आधे से कर्ज अदा करते हो ! यानी तुम सिर से पैर तक कर्ज में डूबे हुए हो फिर तुम पूरी रकम से कर्ज अदा न करके आधे से कर्ज क्यों देते हो ? खुद कर्जदार होकर दूसरों को कर्ज क्यों देते हो ?"

तब चमार ने हाथ जोड़ कर कहा- "महाराज ! मेरा बाप अभी जिन्दा है। लेकिन वह बहुत बूढ़ा हो गया है। कुछ काम नहीं कर सकता। मेरे



बचपन में उसने अपने पसीने की कमाई से मुझे बड़े लाड़-प्यार से पाला-पोसा। उसी की कृपा से मैं बड़ा होकर कुछ कमाने लायक बन गया हूँ। इसलिए मैं अब अपनी कमाई में से रोज दो आने उसके खर्च के लिए देता हूँ। इस तरह मैं अपने बचपन का कर्ज अदा कर रहा हूँ। मैने जब कहा कि 'आधे से कर्ज अदा करता ' तो यही उसका मतलब था।

राजा को चमार की पितृभक्ति देख कर बहुत प्रसन्नता हुई। उसने पूछा "फिर तुमने जो कहा था कि 'आधे से कर्ज दिया



करता' उसका मतलब क्या है ? तुम किस को कर्ज दिया करते हो ?"

तब चमार ने जवाब दिया- ' हुजूर ! किसी पराये को नहीं ! दो आने मैं अपने बेटे को ही कर्ज दिया करता हूँ ! कुछ बाद मैं भी अपने पिता की तरह बूढ़ा बन जाऊँगा और किसी काम के लायक नहीं रहूँगा। तब अगर मेरा बेटा मुझे कमा कर खिलाएगा नहीं तो कौन खिलाएगा ? इसलिए अगर मैं अभी उसको अच्छी तरह पाल-पोसुँगा तो वह भी बड़ा होकर मेरे बुढ़ापे में कर्ज चुका देगा।"

राजा यह सुन कर "वाह ! वाह !" करने लगा। उसे चमार की बात इतनी अच्छी लगी कि वह 'आधे से कर्ज अदा करता, आधे से कर्ज दिया करता' कह कर गीत की तरह गुनगुनाने लगा। इतने में अचानक उसे तमाशा सूझा।

उसने ठीकरू से कहा-"भई ! तुम अपने पद का माने किसी को बताना नहीं। मैं कल अपने दरबार में सब के सामने यह पद पढ़ूँगा और दरबारियों से इसका मतलब पूछूँगा। देखें, कौन क्या कहता है !"

तब चमार ने कहा -"हुजूर ! मैं इस पद का रहस्य बहुत दिनों तक न छिपा सकूँगा। हाँ, आप कोई हद बाँध दीजिए। तब तक मैं अपना मुँह न खोलूँगा।"

अच्छा ! तो जब तक तू सौ बार मेरे दर्शन न कर लेगा तब तक इस पद का माने किसी को न बता सकेगा।" राजा ने कहा।

चमार सि र झुका कर वहाँ से चला गया। दूसरे दिन राजा ने भरे दरबार में चमार का

पद पढ़ा और कहा-"क्या तुम में से कोई इसका मतलब बता सकता है?"

दरबारियों ने बहुत से अटकल भिड़ाए। लेकिन किसी को उसका मतलब मालूम न हुआ। आखिर वे हैरान होकर एक दूसरे का मुँह देखने लगे।

तब राजा अपने दरबारियों का मखौल उड़ाने लगा। आखिर एक मन्त्री ने उठ कर कहा कि "हुजूर! आप मुझे चौबीस घण्टों की मोहलत दीजिए। मैं इस पद का अर्थ बताऊँगा।"

राजा ने उसकी बात मान ली और दरबार बर्खास्त कर दिया।

घर जाकर उस मन्त्री ने सोचा- "जरूर यह पद राजा ने कल किसी से सीखा है ! कल कौन आया था राजा के पास ?"

पूछ-ताछ करने पर उसे मालूम हो गया कि कल एक चमार राजा के पास पकड़ कर लाया गया था। राजा ने उसे कोई सजा नहीं दी। लेकिन उससे बहुत देर तक बातें करके उसे छोड़ दिया !



तुरन्त मन्त्री ने ठीकरू चमार के यहाँ जाकर धमकाया- "क्यों ठीकरू! राजा को तुमने एक पद बताया था। क्यों, सच सच बोलो ! बताया था कि नहीं ?"

तब ठीकरू ने मान लिया कि उसने राजा को एक पद बताया था।

"तो मुझे उस पद का माने बता दो ! तुम जो माँगोगे सो दूँगा।" मन्त्री ने कहा।

"तो आप मुझे सौ अशर्फियाँ दीजिए! उस पद का माने आपको बता दूँगा।" चमार ने कहा। तुरन्त मन्त्री ने उसे सौ अशर्फियाँ दे दीं। चमार ने उनको उलट-पुलट कर, ठोक-बजाकर

देखा और गिन लिया। तब उसने मन्त्री को अपने पद का माने बता दिया।

मन्त्री मन ही मन खुशी से झूमते हुए वहाँ से चला गया। दूसरे दिन दरबार लगते ही मन्त्री ने उठ कर राजा को उस पद का माने बता दिया।

सुन कर दरबार के सभी लोग मन्त्री की चतुरता की प्रशंसा करने लगे। लेकिन राजा गुस्से से आग-बबूला हो गया। उसने सिपाहियों को बुला कर हुक्म दिया-"जाओ ! ठीकरू चमार को तुरन्त पकड़ लाओ !" जब सिपाही उसे पकड़ लाए तो राजा ने दाँत किटकिटाते हुए पूछा-"क्यों रे ! तूने ही मन्त्री को पद का माने बता दिया है ?"

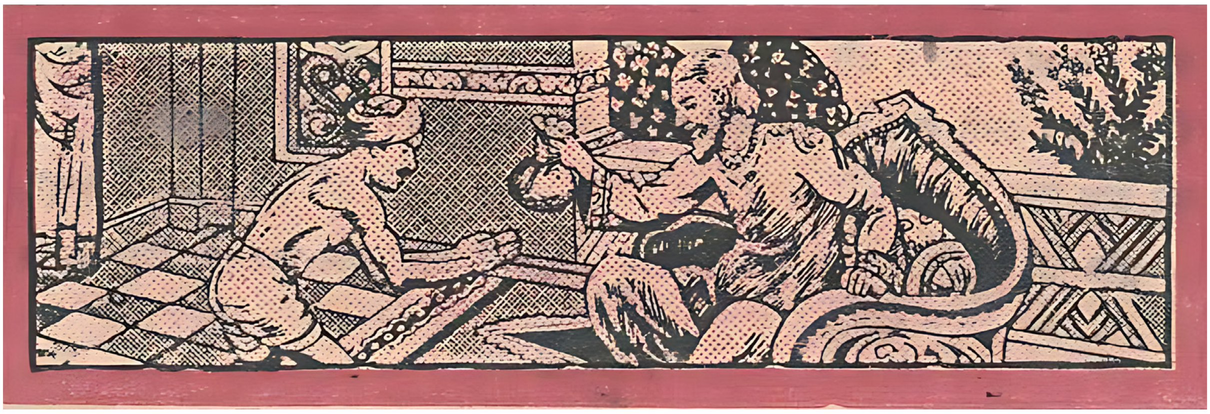
"हाँ, हुजूर!" ठीकरू ने निर्भय होकर कहा।

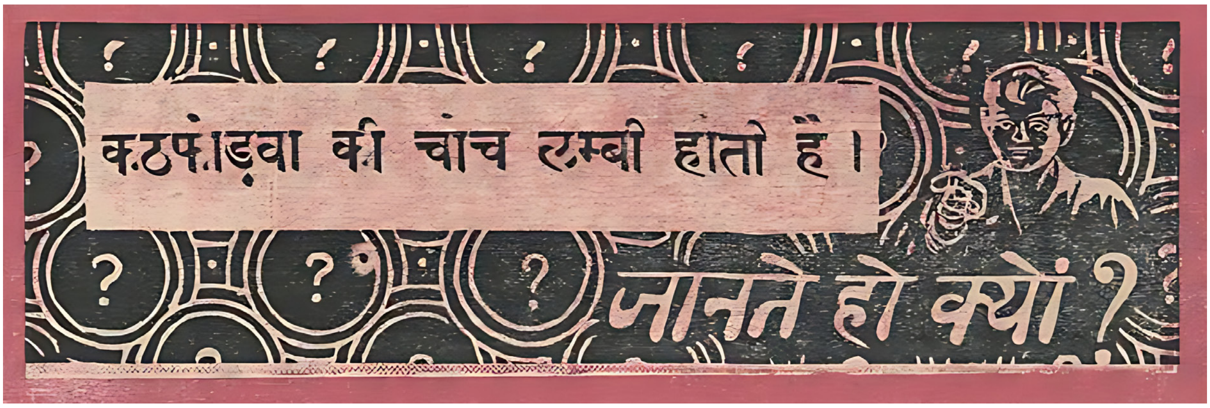
"क्या तूने मुझको वचन नहीं दिया था कि सौ बार मेरे दर्शन किए बिना वह रहस्य किसी को नहीं बताऊँगा ?" राजा ने गरज कर पूछा।

"हुजूर ! सौ बार आपके दर्शन करने के बाद ही मैंने उसका माने मन्त्रीजी को बताया है। अगर आपको इस पर विश्वास न हो तो मन्त्रीजी से ही पूछ लीजिए। उन्हीं के सामने मैंने सौ अशर्फियाँ उलटीं और उनके ऊपर खुरे आपके चित्र के दर्शन करके, उस पद का माने मन्त्री जी को बता दिया।" चमार ने जवाब दिया।

यह सुनते ही राजा का सारा गुस्सा हवा हो गया। उन्होंने कहा-"ठीकरू ! तुम्हारी चतुरता के सामने सौ अशर्फियाँ कुछ भी नहीं हैं। इसलिए लो, ये दो सौ अशर्फियाँ में तुम्हें और देता हूँ।"

यह कह कर राजा ने उसे दो सौ अशर्फियों की एक थैली भेंट की और बड़े आदर भाव से उसे भेज दिया।





किसी समय एक खूसट बुढ़िया रहती थी। वह बड़ी दुष्टा थी। वह सभी की बुराई किया करती थी। वह दीवारों के पीछे छिप कर दूसरों की बातें सुन लेती और एक-दूसरे की चुगली खाती फिरती। वह पति-पत्नी के बीच सन्देह खड़ा कर देती और घर घर में फूट डालती फिरती। वह हर चीज पर अपनी आँखें दौड़ाती और हर बात पर अपनी नाक-भौंह चढ़ाती।

उस बुढ़िया को देख कर दुनियाँ के सब लोग डरते थे। उससे तङ्ग होकर भी कोई उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते थे। लोकमाता दुर्गा देवी ने जब बुढ़िया की ये करतूतें देखीं तो उन्होंने सोचा-"इस दुष्टा को दण्ड देने का वक्त अब आ गया है। नहीं तो लोगों की परेशानी का कोई ठिकाना न रहेगा।"

यह निश्चय कर लोक-माता मानवी रूप में पृथ्वी पर उतरीं। उनके हाथ में एक थैली थी। बूढ़ी के पास जाकर उन्होंने कहा-"नानी ! मैं तुम्हें एक बहुत अच्छी चीज़ भेंट करने आई हूँ। वह चीज़ इस थैली में है। लेकिन एक शर्त है। घर जाने के बाद ही यह थैली खोलनी होगी।"

बुढ़िया ने कहा -"बहुत अच्छा बिटिया ! मैं अपनी रानी बिटिया की बात कैसे टालूँगी ? घर जाने के बाद ही इसे खोलूँगी।" बार बार प्रतिज्ञा करके बुढ़िया थैली लेकर अपने घर चली और दुर्गादेवी अन्तर्धान हो गईं।

लेकिन वहाँ से चार क़दम जाते ही बुढ़िया के हाथ खुजलाने लगे। उसकी आँखें उस थैली पर गड़ गईं। उसकी नाक-भौं बार-बार टेढ़ी होने लगीं जैसे वह अपने-आप

पूछती हो-"क्या छुपा है इस थैली में ? क्या छुपा है ?" बुढ़िया का अब पेट फूलने लगा। थैली को खोले बिना उससे न रहा गया। वह एक कोने में जाकर बैठ गई और बड़ी सावधानी से उस थैली का मुँह खोला। ओह, अब क्या था ? थैली का मुँह खुलते ही उसमें से नाना प्रकार के कीड़े-मकोड़े, चीटे-चींटियाँ, मक्खी-मच्छर, बिच्छू-साँप और भी तरह-तरह के विषैले जीव-जन्तु बाहर निकल कर बिलों में, पेड़ों के खोंखलों में, झाड़ियों में, जहाँ कहीं उन्हें जगह मिली, जाकर छिप गए। यह देख कर बुढ़िया के हाथ-पैर थरथर काँपने लगे।

उसने कहा-"दैया रे दैया ! यह कैसी भेंट मिली है मुझे ?" थैली में जो कीड़े-मकोड़े रह गए थे, उन्हें उसने सट से थैली में बन्द कर दिया ! लेकिन ज्यादातर तो पहले ही भाग गए थे।

इतने में दुर्गा देवी वहाँ आ खड़ी हुई और बोलीं-"ऐ अभागिन ! तू तो बड़ी बदमाश है ! तू इस धरती पर रहने लायक नहीं है। तूने मेरी आज्ञा क्यों तोड़ी? घर जाने के पहले ही थैली क्यों खोली ? उन विषैले कीड़ों को थैली से बाहर क्यों निकाल दिया ? तेरे कारण संसार की कितनी हानि हुई ? जा ! मैं तुझे शाप देती हूँ कि जब तक तू उन सब कीड़ों को चुन कर इस थैली में बन्द न कर देगी, तब तक तु कठफोड़वा बन कर रहेगी।" शाप देकर दुर्गा देवी चली गईं।

देवी के जाते ही वह बुढ़िया कठफोड़वा बन गई। तब से वह अपनी लम्बी चोञ्च से काठ को ठोंक ठोंक कर देखा करती है कि कहीं कोई कीड़ा तो उसमें छिपा नहीं है !



CHANDAMAMA (HINDI) FEB. 1951 REGD. NO. M. 5452

